कुरुक्षेत्र

अप्रैल : 197

PUBLICATIONS DIVISION LIBRARY MINISTRY OF I. & B.

मूल्य : 50 पैसे

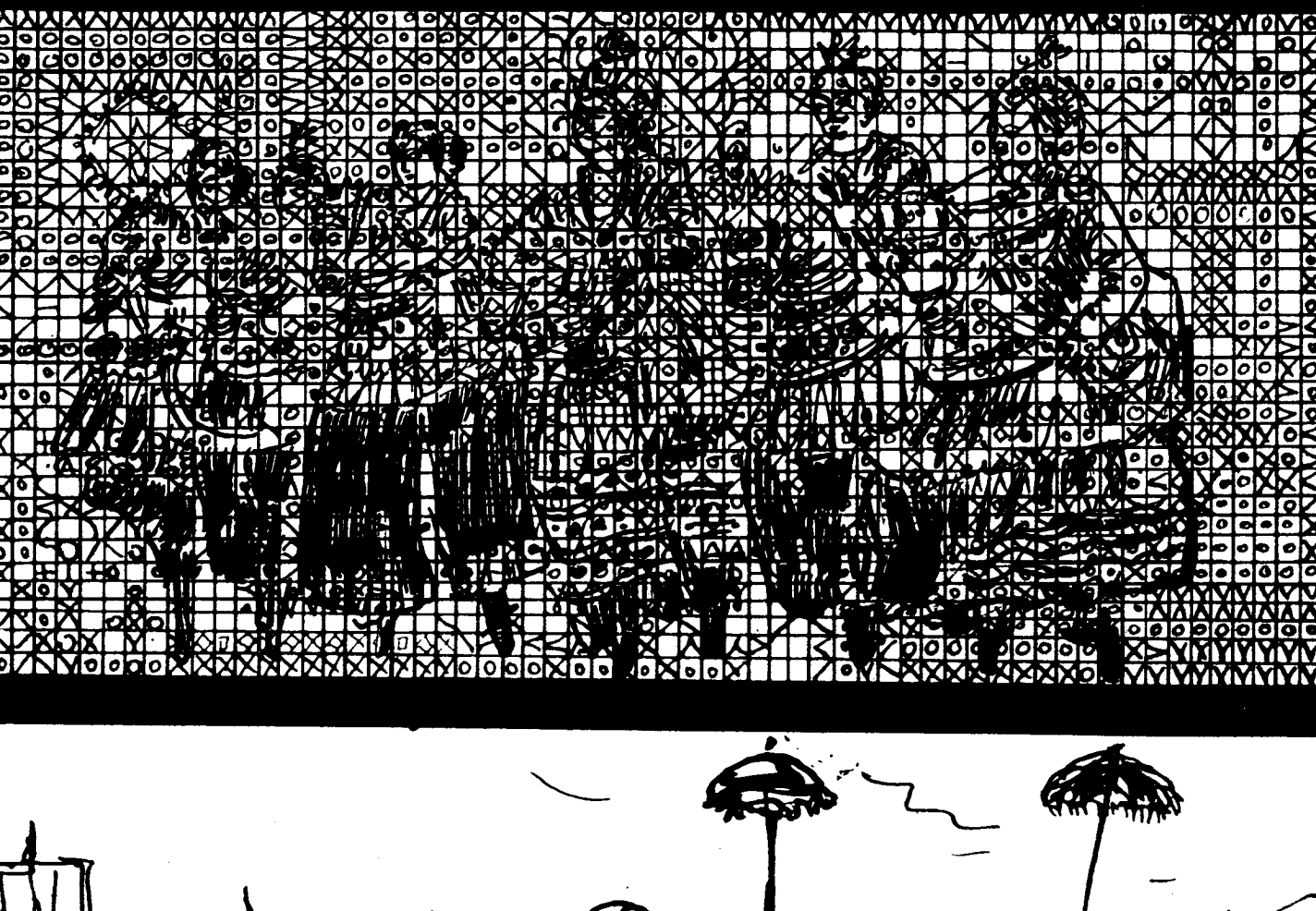

नलगोंडा में उठाऊ सिंचाई

डी० सज्जन सिंह

कृष्णा नदी पर बना नागार्जुनसागर बांध एक बहूद्देश्यीय परियोजना है और आन्ध्र प्रदेश की अर्थ-व्यवस्था में इसका महत्वपूर्ण स्थान है। इस परियोजना के अन्तर्गत दाई ओर की नहर से गुण्टूर, प्रकाशम और नेल्लोर जिलों में बीस लाख एकड़ भूमि पर सिंचाई करने की योजना थी जबकि बाई ओर की नहर से 8.80 लाख एकड़ भूमि पर सिंचाई करने की योजना थी। उठाऊ सिंचाई के लिए भी व्यवस्था थी।

गड्डीपल्ली, कुटुब्शापुरम, पोंगोडे, फतेहपुर, मेडराम, डुपाहड और लिंगला गांवों ने सबसे पहले 1969 में महात्मा गांधी उठाऊ सिंचाई सहकारी समिति बनाकर 7,000 एकड़ भूमि पर उठाऊ सिंचाई शुरू की थी। महात्मा गांधी उठाऊ सिंचाई सहकारी समिति ने क्षेत्र का सघन विकास करने के उद्देश्य से काम किया और दो वर्ष की अवधि में 5,000 एकड़ भूमि पर सिंचाई की। समिति ने वैज्ञानिक विधियों से भूमि का सर्वेक्षण और समतलीकरण कराया है तथा आवश्यक नालियां, सड़कें, भण्डारण और परिवहन तथा बीज, उर्वरक आदि आदान उपलब्ध कराए।

समिति के किसानों की उन्नति देख-कर तथा सहकारी समिति द्वारा किए गए कृषि विकास को देखकर और बहुत से किसान आगे आए और अपनी खेती का व्यापक समेकित विकास करने के विचार से उन्होंने भी उठाऊ सिंचाई अपनाई। अभी तक 41 उठाऊ सिंचाई योजनाएं बनाई गई हैं जिनके अन्तर्गत 70,000 एकड़ भूमि पर सिंचाई की सुविधाएं उपलब्ध की गई है।

आन्ध्र प्रदेश सरकार ने 1972 में उठाऊ सिंचाई योजनाएं स्वीकृत की है जो किसानों की सहकारी समिति तथा सरकार के सहयोग से चलाई जाएंगी और इनसे 30,000 एकड़ भूमि पर सिंचाई सुविधाएं उपलब्ध की जाएंगी। इसके लिए सरकार ने आपात्कालीन कृषि उत्पादन कार्यक्रम के अन्तर्गत 97.3 लाख रुपए दिए हैं।

इन योजनाओं को समेकित बहु-देश्यीय परियोजनाओं के रूप में शुरू किया गया है। इनके तहत उठाऊ सिंचाई, भूमि विकास, सड़कों का निर्माण, गोदामों का निर्माण, क्षेत्र की नहरों की लाइनिंग और ट्रैक्टर ग्राहक सेवाएं उपलब्ध की जाएंगी ताकि किसान को सभी सेवाएं मिलें तथा वह अधिकाधिक उत्पादन प्राप्त करे। बाकी दो तिहाई राशि किसान स्वयं स्टेट बैंक आफ हैदराबाद तथा आंध्र बैंक से अनुदान प्राप्त करके जुटाएंगे। स्टेट बैंक आफ हैदराबाद ने 15 योजनाओं के लिए 3.2 करोड़ रुपए स्वीकृत किए हैं। शेष दो योजनाओं को यह राशि आन्ध्र बैंक देगा।

जून, 1973 में अन्नाराम और गड्डी-पल्ली ग्रामों की उठाऊ सिंचाई योजनाएं शुरू की गई। अन्नाराम की योजना पर 40 लाख रुपया लगेगा तथा इससे 2,811 एकड़ भूमि पर सिंचाई की जा सकेगी जबकि गड्डीपल्ली योजना पर 10 लाख रुपया व्यय होगा और इससे 495 एकड़ भूमि पर सिंचाई की जा सकेगी। ये योजनाएं व्यापक और समेकित हैं तथा प्रत्येक किसान इन योजनाओं का ही एक अंग है।

कुरुक्षेत्र

वर्ष 19 [illegible] अंक 6

इस अंक में

	पृष्ठ
नलगोंडा में उठाऊ सिंचाई	आवरण II
डॉ० सज्जन सिंह	
राष्ट्रीय एकता के लिए देवनागरी का महत्व	2
प्रो० शेरसिंह	
पोषाहार कार्यक्रम : अगला कदम	5
बटुकेश्वर दत्त सिंह 'बटुक'	
ऊर्जा और खाद के लिए गोबर गैस संयन्त्र	7
एस० डी० राय	
ग्रामीण रोजगार योजना : एक वरदान	9
टी० सी० पाण्डे	
निरुपयोगी वस्तुओं से धनोपार्जन	11
नारायण प्रसाद शर्मा	
सहकारी संगठनों में श्रमिक अशान्ति पर अंकुश की आवश्यकता	12
बी० आर० सिंह	
नन्दौरा ग्राम के उद्धारक श्री अब्दुल शमी	14
विजय कुमार जैन	
सहकारी समितियां एवं प्रौढ़ शिक्षा	15
जसवन्त सिंह भण्डारी, नन्द किशोर पालीवाल	
भविष्य के गांव	17
बलदेव सिंह आर्य	
विजेताओं को पुरस्कार	18
निजी प्रतिनिधि द्वारा	
पांचवीं योजना में ग्राम विकास	20
कृषि में पूर्ण और अल्प बेरोजगारी की समस्या	22
हेमचन्द जैन	
समृद्धि के लिए पम्प का प्रयोग	24
सहकारी खेती : उद्देश्य और लाभ	25
देवकीनन्दन पालीवाल	
कार्बनिक खाद से उपज बढ़ाइए	27
डा० एस० आर० बरुआ	
पहला सुख निरोगी काया	29
वैद्य भूदेव वर्मा भिषगाचार्य	
संचय (कहानी)	30
श्रीराम शर्मा 'राम'	
वह मेरा हिन्दुस्तान (कविता)	32
कुन्दन सिंह सजल	
केन्द्र के समाचार	33
राज्यों के समाचार	34
साहित्य समीक्षा	36
नरेन्द्र जोशी, सुरेन्द्र प्रसाद अग्रवाल	

दूरभाष 382406

एक प्रति 50 पैसे : वार्षिक चन्दा 5 रुपए

सम्पादक : पी० श्रीनिवासन

सह० सम्पादक : महेन्द्रपाल सिंह

[illegible] : [illegible]

भाषा, लिपि और एकता

भाषा और लिपि में राष्ट्रीय एकता स्थापित करने की बहुत बड़ी शक्ति निहित होती है। इसीलिए स्वतन्त्रता-प्राप्ति से पूर्व हिन्दी को राष्ट्रीय एकता को सुदृढ़ करने की एक प्रमुख कड़ी के रूप में समझा गया था और इसी कारण स्वतन्त्रता प्राप्त होने पर भारतीय संविधान में यह व्यवस्था की गई थी कि सन् 65 से संसद् और केन्द्रीय सरकार का सारा कार्य राष्ट्र-भाषा हिन्दी में और विभिन्न राज्यों का कार्य प्रत्येक राज्य की अपनी राज-भाषा में होना चाहिए। पर खेद है कि अभी तक यह स्थिति नहीं आ पाई और कहीं कहीं तो भाषाओं के विवाद की स्थिति पैदा हो गई है। प्रधान मन्त्री श्रीमती इन्दिरा गांधी ने अलीगढ़ विश्वविद्यालय में दीक्षान्त समारोह के अवसर पर दिए गए अपने भाषण में कहा था कि सभी भारतीय भाषाओं को जनता में एकता बढ़ाने का प्रयत्न करना चाहिए और लोग भाषाई मामलों को लेकर घृणा और द्वेष का वातावरण पैदा न करें? हमें श्रीमती गांधी की इस नेक सलाह का अनुसरण करना चाहिए और ऐसे कदम उठाने चाहिए कि हिन्दी पूर्ण विकसित और समृद्ध होकर अपना उचित स्थान ग्रहण करे और राष्ट्रीय एकता को सुदृढ़ करने में योग दे सके।

भारत की अन्य सभी भाषाएं हिन्दी की तरह संस्कृत से प्रेरणा पाकर ही विकसित और परिपुष्ट हुई हैं और सच्चे अर्थ में हिन्दी की सहोदराएं हैं। जब वे सहोदराएं हैं तो पारस्परिक विरोध का प्रश्न ही नहीं उठता। चूंकि हिन्दी उनमें सबसे अधिक बोले जाने और समझे जाने वाली भाषा है, अतः उसे सम्पर्क भाषा के रूप में स्वीकृत किया गया है। जब वह पूर्णरूप से सम्पर्क भाषा का रूप धारण कर लेगी और निहित स्वार्थ अपने व्यक्तिगत हितों से ऊपर उठकर उसे अपनाएंगे तो निस्सन्देह हमारी राष्ट्रीय एकता सुदृढ़ होगी।

जहां तक लिपि का सम्बन्ध है, विनोबा जी ने ठीक ही कहा है कि यदि देश की सभी भाषाएं देवनागरी लिपि को अपनालें तो भारत एक मजबूत राष्ट्र बन जाएगा। लिपि से भाषा का ज्ञान होता है और उससे हृदय की एकता स्थापित होती है। अगस्त 1961 में देश की भावात्मक एकता पर विचार करने के लिए मुख्य मन्त्रियों का जो सम्मेलन हुआ था उसने भी सिफारिश की थी कि देश की सभी भाषाओं के लिए नागरी लिपि का प्रयोग होना चाहिए क्योंकि वह भारत की सभी भाषाओं के बीच एक सेतु का काम करेगी और उससे देश की भावात्मक एकता को बढ़ावा मिलेगा।

दक्षिण भारत की भाषाओं की लिपियों को छोड़कर भारत की सभी भाषाओं की लिपियां देवनागरी से मिलती जुलती हैं और उनके लिए देवनागरी को आसानी में अपनाया जा सकता है। यदि दक्षिण की भाषाएं भी देवनागरी का प्रयोग करने लगें तो उन्हें आसानी से सीखा जा सकता है। इतिहास से पता चलता है कि प्राचीन काल में भारत भावात्मक दृष्टि से एक था और यह एकता संस्कृत और ब्राह्मी लिपि के माध्यम से कायम हुई थी। समय को देखते हुए आज यह एकता हिन्दी और देवनागरी लिपि के माध्यम से कायम हो सकती है।

राष्ट्रीय एकता के लिए देवनागरी का महत्व

प्रो० शेरसिंह

राष्ट्रीय एकता के लिए देवनागरी के महत्व की ओर विनोबा जी का ध्यान आकृष्ट हुआ है। आज यूरोप में साझा बाजार और साझी सुरक्षा की योजनाएं लागू की जा रही हैं। यूरोप यद्यपि कई देशों में विभक्त है किन्तु अब वहां सम्पूर्ण यूरोपीय एकता की दिशा में एक कदम उठाया जा रहा है। इस दिशा में रोमन लिपि की भूमिका को विनोबा जी ने ठीक ही पहचाना है। रोमन लिपि के कारण आज अंग्रेजी, फ्रेंच, जर्मन, डच, पोलिश आदि में से किसी भी एक भाषा को जानकर दूसरी भाषा आसानी से सीखी जा सकती है। लिपि से भाषा का ज्ञान होता है और उससे हृदय की एकता स्थापित होती है। इस दृष्टि से विनोबा जी ने कहा है कि यदि हम सारे देश के लिए देवनागरी को अपना लें तो हमारा देश बहुत मजबूत हो जाएगा। फिर तो, देवनागरी ऐसी रक्षा-कवच सिद्ध हो सकती है जैसी कोई सेना भी नहीं हो सकती।

अगस्त, 1961 में देश की भावात्मक एकता पर विचार करने के लिए मुख्य मन्त्रियों का जो सम्मेलन हुआ था उसने सिफारिश की थी कि समस्त भारतीय भाषाओं के लिए एक सामान्य लिपि का होना वांछनीय ही नहीं, आवश्यक भी है क्योंकि ऐसी लिपि भारतीय भाषाओं के बीच एक सेतु का काम करेगी और उससे देश की भावात्मक एकता को बढ़ावा मिलेगा। इस सिलसिले में मुख्य मन्त्रियों के इस सम्मेलन की यह भी राय थी कि देश की वर्तमान स्थिति को देखते हुए देवनागरी लिपि ही ऐसी लिपि हो सकती है।

हजारों वर्ष पुराने इस देश में भाषा और लिपि की कहानी भी अत्यन्त प्राचीन है। समय के धूमिल क्षितिज में हमें इसके ओर-छोर का कोई पता नहीं लगता। तथापि इतना अवश्य है कि हमारे उत्कर्ष काल में एक भाषा अर्थात् संस्कृत और एक लिपि अर्थात् ब्राह्मी ने देश भर में एकसूत्रता पिरोयी है। उस समय हमारे देश की सीमाएं आज की सीमाओं से काफी विस्तृत थीं। उत्तर में चीन, तुर्किस्तान, अफगानिस्तान, तिब्बत, नेपाल, और पूर्व में बर्मा से लेकर इंडोनेशिया, सिंगापुर, मलेशिया, थाइलैंड, कम्बोडिया और अनाम और दक्षिण में लंका तक भारतीय संस्कृति के उद्घोष गुंजित होते थे। इन देशों में भारतीय संस्कृति का रंग कितना गहरा था वह इनके हिंदेशिया और हिंद-चीन नामों से ही प्रकट है। संस्कृत को देवीवाक् (देववाणी) की संज्ञा दी गई है (संस्कृत नाम देवी वाक्-आचार्य दंडी)। इतने विस्तृत भू-प्रदेश में विचारों के आदान-प्रदान और समस्त सांस्कृतिक कार्यों में इसका प्रयोग होता था। वास्तविकता तो यह है कि भारत ही नहीं, इन सभी देशों की भाषाओं का पोषण उसी संस्कृत के अक्षय भण्डार से हुआ है। संस्कृत भारत की बहुलांश भाषाओं की जननी है और शेष भारतीय भाषाओं के अतिरिक्त उपर्युक्त वृहत्तर भारत की भाषाओं की भी वह धाय रही है। संस्कृत के प्रायः 40-50 हजार शब्द भारत की सभी भाषाओं के साहित्य में, उत्तर से दक्षिण और पूर्व से पश्चिम तक प्रचलित हैं। इस समान एकता के कारण भारत में भाषा भेद होते हुए भी साहित्य-भेद कभी नहीं हुआ है। समूचा भारतीय साहित्य सदा से एक और आज भी मूलतः एक है।

भारतीय इतिहास में अशोक एक महान राजा हुआ है। वह शांति का अग्रदूत था। उत्तर में हिमालय से दक्षिण में कर्नाटक तक, पश्चिम में अफगानिस्तान से लेकर बंगाल तक उसका राज्य विस्तृत था। अपने इस विशाल साम्राज्य में ही नहीं, उस समय ज्ञात सम्पूर्ण विश्व में सीरिया और मिश्र तक उसने शांति और मैत्री के युग का प्रारम्भ किया था। धर्म के प्रचार के लिए उसने पर्वत-शिलाओं और प्रस्तर-स्तम्भों पर लेख खुदवाए थे। ब्राह्मी लिपि में खुदे उसके ये लेख उत्तर में हिमालय की उपत्यका (कालसी) से लेकर दक्षिण में कर्नाटक (सिद्धपुर) तक और पश्चिम में गिरनार (सौराष्ट्र) से उड़ीसा (धौली और जौगड़) तक मिलते हैं। इस प्रकार हम देखते हैं कि आज से 2300 वर्ष पूर्व समूचे भारत में एक लिपि का प्रचार था और उसका एक ही नाम था ब्राह्मी। वह सच्चे अर्थों में भारत की राष्ट्रीय लिपि थी जो पाटलिपुत्र के केन्द्रीय सचिवालय द्वारा स्वीकृत थी। इसी ब्राह्मी लिपि से हमारे देश की सभी वर्तमान लिपियां देवनागरी, गुजराती, गुरुमुखी, बंगला, असमिया, उड़िया, तमिल, तेलगु, मलयालम, कन्नड़ आदि आदि निकली है। इन सबका मूल एक ही है।

अशोक के बाद ब्राह्मी लिपि का प्रयोग ईसा पूर्व दूसरी शताब्दी में शुंग लिपि के रूप में, ईस्वी पहली दूसरी शताब्दी में कुशाण लिपि और पांचवीं

शताब्दी में गुप्त लिपि [illegible] प्रारम्भ हुआ। गुप्त साम्राज्य [illegible] से कश्मीर और नेपाल से दक्षिण भारत तक विस्तृत था। दक्षिण के वाकाटक और कदम्ब राजाओं से इनके राजनैतिक और वैवाहिक सम्बन्ध थे। पवनार जहां आज हम एकत्र हैं वहां प्रसिद्ध वाकाटक राजा प्रवरसेन का बनाया हुआ प्रवरसेनपुर नगर था जिसे वाकाटक साम्राज्य की राजधानी होने का सौभाग्य प्राप्त था। इस प्रकार मौर्यों के बाद गुप्तों के काल तक संस्कृत और ब्राह्मी लिपि के माध्यम से भारत में भाषा और लिपि की एकता अक्षुण्ण रही। उत्तर भारत में गुप्त लिपि का कुटिल अथवा सिद्धमातृका लिपि के रूप में विकास हुआ जिसने आगे जाकर नागरी लिपि का रूप धारण किया। इस गुप्त लिपि के दो विकसित रूप थे—पूर्वी और पश्चिमी। इसके पूर्व रूप से बंगला लिपि का विकास हुआ। आगे चल कर उड़िया और असमिया की लिपियां भी इसी से निकलीं। पश्चिम में इसका विकास शारदा लिपि में हुआ जो पंजाब और कश्मीर में प्रचलित थी। गुरुमुखी, टाकरी आदि लिपियां इस पश्चिमी शाखा की ही उपज हैं।

दक्षिण भारत में भी ब्राह्मी का ऐसा ही विकास हुआ और पल्लव लिपि के रूप में यह समस्त दक्षिण भारत की लिपि बनी। इसी पल्लव लिपि से कालान्तर में तेलुगु और कन्नड़, मलयालम तथा ग्रन्थ लिपि (तमिलनाडु में संस्कृत के लिए इसी लिपि का व्यवहार होता था) और तमिल लिपियों का जन्म हुआ।

ब्राह्मी लिपि ने इस देश के बाहर बृहत्तर भारत में भी प्रचार पाया था। भारत से लेकर मध्य एशिया और जापान तक धार्मिक ग्रन्थों के लिए इसका प्रयोग होता था। 7वीं शताब्दी के मध्य में तिब्बत के राजा स्रोंग चन्न गम्पो ने नालन्दा में अपने विद्यार्थी भेज कर वहां तिब्बती में इस लिपि का आयात किया था। इसी प्रकार पूर्व में बर्मा, इंडोनेशिया, थाइलैंड, कम्बोडिया और अनाम जहां-कहीं भी भारतीय संस्कृति गई वहां उसके साथ ही साथ इस लिपि का भी प्रचार हुआ था। इन सभी देशों में ब्राह्मी लिपि में संस्कृत के लेख प्रचुर मात्रा में मिलते हैं।

इस प्रकार अतीत काल में यह ब्राह्मी लिपि वास्तविक अर्थों में एक विश्व लिपि थी।

समस्त भारत के लिए एक अतिरिक्त लिपि के रूप में नागरी का प्रयोग कोई नई बात नहीं है। इतिहास के धूमिल अन्धकार में भी जब तक देश में विभिन्न क्षेत्रीय लिपियां विकसित हो चुकी थीं उस समय भी देश के प्रायः सभी भागों में एक अतिरिक्त लिपि के रूप में इसका बराबर प्रचार था। दक्षिण में पल्लव राजाओं के (7वीं शताब्दी) अपने शिलालेखों में ग्रन्थ और तमिल लिपियों के अतिरिक्त नागरी का भी प्रयोग होता था। पल्लवों के परवर्ती चोल राजाओं ने भी अपने सिक्कों पर नागरी लिपि का प्रयोग किया। उत्तम चोल, राजराज और राजेन्द्र गंगेकोंड चोल के प्राचीनतम सभी सिक्कों पर नागरी का प्रयोग हुआ है। दक्षिण में इस लिपि का प्रभाव इतना अधिक था कि यह चोल राज्य से आगे उन द्वीपों में भी चलाई गई जिन्हें चोल राजाओं ने जीता है। लंका में पराक्रमबाहु विजयबाहु, लीलावती साहसमल्ल धर्माशोक, भुवनेकबाहु आदि के सिक्कों पर इसका प्रयोग हुआ है। पश्चिमी चालुक्यों (आठवीं शताब्दी) ने भी अपने शिला-लेखों में कन्नड़ लिपि के साथ-साथ नागरी लिपि का प्रयोग किया था। मद्रास म्यूजियम में सुरक्षित कांची से प्राप्त 7वीं शताब्दी के एक शिलालेख में ग्रन्थ लिपि के एक दानपत्र का नागरी रूपान्तर भी मिलता है।

दक्षिण के राष्ट्रकूट (7वीं शताब्दी) राजाओं के अधिकांश शिलालेख नागरी में ही मिलते हैं। वस्तुतः नागरी का प्राचीन शिलालेख राष्ट्रकूट वंश का ही है।

श्रवणबेलगोला में दसवीं से बारहवीं शताब्दी के बीच के अनेक शिलालेख मिले हैं। इनसे पता चलता है कि उस समय वहां कन्नड़, ग्रन्थ और नागरी तीनों लिपियों का प्रयोग होता था।

नागरी लिपि का प्रयोग दक्षिण में विजय नगर राज्य में 'नन्दीनागरी' के नाम से होता था और 15 वीं शताब्दी के आगे तो वह चरमोत्कर्ष पर पहुंच चुका था। इस काल में इस राज्य में कन्नड़, तमिल और ग्रन्थ लिपियों का भी प्रयोग होता था, किन्तु उस समय इस प्रदेश की प्रधान लिपि नागरी थी, विशेषकर ताम्रपत्रों में तो इसी लिपि का प्रयोग होता था। 18 वीं शताब्दी में तंजोर के महाराष्ट्र शासकों ने तो सर्वत्र नागरी लिपि का प्रयोग किया था।

अतिरिक्त लिपि के रूप में मुसलमान शासकों ने भी नागरी की प्रतिष्ठा की। महमूद गजनवी के सिक्कों पर अरबी कलमा का संस्कृत अनुवाद (अव्यक्तमेकपुरुषं अवतार मुहम्मद) देवनागरी के रूप में अंकित है। मुहम्मद बिनसाम (12 वीं शताब्दी) के सिक्कों पर 'श्रीमद्हमीरमहमद साम', शमसुद्दीन अल्तमश (तेरहवीं शताब्दी) के सिक्कों पर 'सुरितन श्री समासदीन', गयासुद्दीन बलबन (तेरहवी शताब्दी) के सिक्कों पर 'श्री सुलतां मुइजुद्दीं' अंकित है। सम्राट अकबर ने अपने एक सिक्के पर बनवासी राम-सीता का अंकन कराया था जिस पर देवनागरी में 'राम सीय' लिखा है।

वस्तुतः देवनागरी का विरोध तो अंग्रेजों के समय में प्रारम्भ हुआ। 'नागरी' के प्रचार से भारत के नागरिकों का उद्बुद्ध होना स्वाभाविक ही था जो अंग्रेज शासकों को पसन्द न था। इसलिए उन्होंने बराबर नागरी के प्रचार को रोका। किन्तु वे भारतीय नागरिकों में उठती जागरूकता को नहीं रोक सके। देशभक्त भारतीयों ने जब 'नागरी' और 'नागरिकों' के सम्बन्ध को पहिचाना तो उसी समय से नागरी के ग्रहण और प्रचार का आन्दोलन शुरू हो गया। स्वयं गुजराती भाषी होते हुए भी महर्षि दयानन्द ने हिन्दी और देवनागरी का प्रचार किया। वस्तुतः नागरी प्रचार

आन्दोलन के जनक बंगवासी जस्टिस शारदाचरण मित्र थे। मित्र महाशय ने 20 वीं शताब्दी के प्रारम्भ में 'एक लिपि विस्तार परिषद्' नामक एक संस्था की स्थापना की थी, जिसके तत्वाधान में देवनागरी नाम का एक पत्र भी वे निकालते थे। लोकमान्य तिलक ने सन् 1905 में ही भारत की सामान्य लिपि के रूप में देवनागरी को अपनाने का सुझाव दिया था। न्यायमूर्ति मित्र महोदय द्वारा आयोजित एक लिपि सम्मेलन के अध्यक्ष के पद से प्रसिद्ध विद्वान श्री वी० कृष्णस्वामी अय्यर ने सन् 1910 में देवनागरी को अपनाने का सुझाव दिया था। उसी के आसपास महात्मा गांधी ने भी कहा था :—

'सभी भाषाओं की लिपि देवनागरी होनी चाहिए और मुझे विश्वास है कि देवनागरी के द्वारा द्रविड़ भाषाएं भी आसानी से सीखी जा सकती हैं।'

पंडित जवाहरलाल नेहरू भी इसी पक्ष में थे। अपनी मृत्यु से कुछ समय पूर्व पंडित जी ने कहा था कि समस्त भारतीय भाषाओं के लिए एक समान लिपि को कभी न कभी तो अपनाना ही होगा। नेहरू जी ने तब यह भी कहा था कि देवनागरी को समस्त भारतीय भाषाओं के लिए अतिरिक्त लिपि के रूप में स्वीकार कर लेना चाहिए। इससे एक राज्य के निवासी दूसरों की भाषाएं सरलता से सीख सकेंगे क्योंकि वास्तविक कठिनाई भाषा की उतनी नहीं जितनी लिपि की है।

भारतीय एकता के लिए समान लिपि के रूप में देवनागरी के ग्रहण की उपयोगिता निर्विवाद है। आज भी देवनागरी पर्याप्त मात्रा में यह कार्य कर रही है। भारत की सभी प्राचीन भाषाओं, जैसे संस्कृत, पाली, प्राकृत, अपभ्रंश, ब्रज, अवधी आदि आदि और आधुनिक भाषाओं जैसे हिन्दी, मराठी, नेपाली, डोगरी, मैथिली आदि की लिपि देवनागरी है। अब सिंधी ने भी इसे अपना लिया है।

अभी कुछ वर्षों पहले तक अरुणाचल प्रदेशों की भाषाओं के पास अपनी कोई लिपि नहीं थी। अब ये भाषाएं देवनागरी लिपि में लिखी जा रही हैं। इससे उस प्रदेश में साक्षरता की वृद्धि में गति क्षिप्र हुई है। अभी कुछ ही दिन हुए प्रसिद्ध विद्वान डा० सुनीति कुमार चाटुर्ज्या ने कोंकणी के लिए भी इसी लिपि के ग्रहण की सिफारिश की है। गुजराती लिपि में शिरोरेखा लगा देने मात्र से वह देवनागरी बन जाती है। अन्य भारतीय लिपियां देवनागरी की सगी बहनें हैं, इसलिए उनके चेहरे-मोहरे मिलते-जुलते हैं। वस्तुतः सच तो यह है कि शिक्षित भारतीयों में 90 प्रतिशत से अधिक इस लिपि से परिचित हैं। इसलिए देश की समान लिपि के रूप में देवनागरी के ग्रहण के मार्ग में कोई बाधा नहीं आनी चाहिए।

भारतीय भाषाओं की वर्णमाला प्रायः वही है जिसका पाणिनि ने माहेश्वर सूत्र में व्याख्यान किया है। यह संचार की सबसे वैज्ञानिक वर्णमाला है। भारत की सभी भाषाओं में स्वरों के ह्रस्व-दीर्घ का क्रम, व्यंजनों का विभाजन आदि एक जैसा है और कुछ हेर-फेर से उनमें ध्वनियों की संख्या भी लगभग समान है। भारतीय ध्वनियों का वर्गीकरण वास्तव में एक वैज्ञानिक आधार पर हुआ है। पाणिनि आदि व्याकरणाचार्यों ने इसकी आधारशिला पहले ही डाल दी थी। इनमें पहले स्वर, फिर व्यंजन और अन्त में अन्तस्थ ऊष्म आदि कुछ विशेष ध्वनियां आती हैं। इनके वर्गीकरण की दाद आज के अद्यतन् भाषाशास्त्री (Linguisticians) भी करते हैं। अभिनव भाषा विज्ञान (Linguistics) में भी ध्वनियों क वर्गीकरण में 'स्थान' और 'प्रयत्न' भेद पर जोर दिया जाता है जिसे 'पाइन्ट आफ आर्टिकुलेशन' और 'मैन्नर आफ आर्टिकुलेशन' की संज्ञा दी जाती है। क वर्ग, च वर्ग, ट वर्ग, त वर्ग और प वर्ग कुछ नहीं बल्कि स्थान भेद ही हैं। इसी तरह घोषत्व (Voicing) और महाप्राणत्व (Aspiration) प्रयत्न भेद के उदाहरण हैं, जिनके अधार पर 'क' से 'ग' और 'ग' से 'घ' का भेद किया जाता है।

भारतीय भाषाओं की इस परिपूर्ण ध्वनि-सम्पत्ति को प्रकट करने के लिए देवनागरी की उपयोगिता के बारे में दो मत नहीं हैं। इतनी सारी ध्वनियों को प्रकट करने के लिए वही लिपि खरी उतर सकती है, जिसमें लिपि चिह्न पर्याप्त हों, लिपि-चिह्नों के नाम ध्वनि के अनुरूप हों और उसमें प्रत्येक ध्वनि के लिए एक लिपि चिह्न हो। कहने की आवश्यकता नहीं कि देवनागरी इन सभी गुणों में श्रेष्ठ है। प्रान्तीय भाषाओं में कतिपय ध्वनियां ऐसी अवश्य हैं, जिनके लिए देवनागरी में फिलहाल लिपि-चिह्न नहीं हैं। शिक्षा मन्त्रालय ने कुछ विशेष चिह्नों का प्रयोग कर परिवर्द्धित देवनागरी के जरिए इस कमी को भी पूरा कर दिया है। जहां तक अक्षरों की बनावट का सम्बन्ध है, देवनागरी ही ऐसी लिपि है जिसकी आकृति में बिना कोई विकार उत्पन्न किए अनेक भाषाएं लिखी जा सकती हैं।

भारत सरकार की ओर से अब इस बात के प्रयत्न भी जारी हैं, जिनसे देवनागरी आज के युग में गति, सुगमता और आवश्यक यन्त्रों के अनुरूप रोमन की तरह व्यापक बन जाए। संचार मन्त्रालय के तत्वावधान में अब हिन्दुस्तान टेलीप्रिंटर के कारखाने में देवनागरी के जो टेलीप्रिंटर बनेंगे वे शिक्षा मन्त्रालय द्वारा स्वीकृत इस परिवर्द्धित देवनागरी के आधार पर ही बनाए जाएंगे। यान्त्रिक आवश्यकताओं की दृष्टि से संचार मन्त्रालय ने जो टेलीप्रिंटर बनाया है सम्पूर्ण भारतीय भाषाओं के प्रयोग के लिए उपयोगी है। इस टेलीप्रिंटर पर देवनागरी लिपि में लिखा सन्देश किसी भी भारतीय भाषा में भेजा जा सकता है।

अभी हाल ही में डाक-तार विभाग के सम्मुख यह भी प्रस्ताव आया है कि जापान और थाईलैंड की तरह अपने देश में भी द्विलिपिक टेलीप्रिंटर बनाने चाहिए। इस प्रस्ताव को कार्यान्वित करने के लिए एक ऐसे टेलीप्रिंटर के निर्माण पर विचार हो रहा है जिसमें रोमन और देवनागरी दोनों लिपियों में सन्देश भेजे सकते हैं।

यदि एक कुंजी दबा दें तो रोमन में सन्देश भेजा जाएगा और दूसरी कुंजी दबाने पर देवनागरी में। यह प्रस्ताव सिद्धान्त रूप में मान लिया गया है। □

पोषाहार कार्यक्रम : अगला कदम

बटुकेश्वर दत्त सिंह "बटुक"

हम भारतीय एक सर्वप्रभुता सम्पन्न लोकतन्त्रात्मक गणराज्य के नागरिक हैं। हमारा संविधान राष्ट्र के प्रत्येक नागरिक को सामाजिक न्याय के साथ समुचित पोषाहार उपलब्धि की ओर स्पष्ट निर्देश करता है। प्रत्येक कल्याणकारी राज्य में पोषाहार कार्यक्रम को प्राथमिक महत्व मिलना ही चाहिए। राष्ट्र के वर्तमान एवं भावी नागरिकों के शारीरिक, मानसिक एवं सामाजिक सुस्वास्थ्य के लिए पौष्टिक एवं सन्तुलित आहार की प्राथमिक आवश्यकता होती है। इस दिशा में पंचवर्षीय योजनाओं के प्रारम्भ से ही राज्य सरकारों, केन्द्रीय सरकार तथा विभिन्न अन्तर्राष्ट्रीय संस्थाओं के सम्मिलित सहयोग से समाज कल्याण विभाग, शिक्षा विभाग, सामुदायिक विकास विभाग, स्वास्थ्य विभाग आदि के माध्यम से नियोजित प्रयास किए जाते रहे हैं। परन्तु इनके द्वारा सभी जरूरतमन्द लोगों तक पोषाहार सम्बन्धी सुविधाएं समुचित रूप से नहीं पहुंचाई जा सकीं, क्योंकि 55 करोड़ जनसंख्या वाले इस विकासशील देश को सामाजिक, आर्थिक, राजनैतिक, सांस्कृतिक आदि सभी मोर्चों पर एक साथ कुमुक पहुंचानी पड़ रही है। विकास की सीढ़ियों पर चढ़ते रहने के लिए हमें अपने वर्तमान साधनों का पूर्ण सदुपयोग करते हुए निरन्तर नियोजित प्रयास करते रहने होंगे, तभी हम अपने संविधान में निर्दिष्ट सामाजिक न्याय के साथ समुचित पोषाहार पा सकेंगे।

पांचवीं पंचवर्षीय योजना में राष्ट्रीय न्यूनतम आवश्यकता कार्यक्रम के अन्तर्गत योजना आयोग ने पोषाहार व्यवस्था के लिए पांच सौ तीस करोड़ बीस लाख रुपयों की पूंजी निर्धारित की है, जिसके द्वारा गर्भवती माताओं तथा बच्चों के लिए पोषक आहार की सुविधाएं प्रदान की जाएंगी। इनमें देहाती तथा पिछड़े इलाकों पर विशेष ध्यान दिया जाएगा, जहां अल्पपोषण तथा कुपोषण की समस्या का सर्वाधिक कुप्रभाव पड़ रहा है। कुपोषित माताओं से स्वस्थ शिशुओं की आशा नहीं की जा सकती। किसी राष्ट्र का भविष्य उसके शारीरिक एवं

मानसिक रूप से स्वस्थ नागरिकों पर ही निर्भर करता है, जो तभी सम्भव है जब उनको जन्म देने वाली माताएं सुपोषित हों और जन्म लेने के उपरान्त उनके बढ़ोत्तरी काल में बच्चों को समुचित पोषाहार सुलभ हो सके। इन्हीं-दुर्बल वर्गों, विशेषकर बच्चों और स्त्रियों के लिए राष्ट्रीय न्यूनतम आवश्यकता कार्यक्रम के अन्तर्गत पोषाहार व्यवस्था हमारा अगला कदम है। इस पर चलकर हमें वांछित सफलता तभी प्राप्त हो सकती है जब इस राष्ट्रीय कार्यक्रम में राज्य की ओर से किए गए प्रयासों में जनता, जनप्रतिनिधियों एवं स्थानीय जन संस्थाओं का पूर्ण सहयोग प्राप्त हो।

जन सहयोग

कुपोषण के कुप्रभावों से सुरक्षा प्रदान कराने के निमित्त आवश्यक होगा कि गर्भवती व दूध पिलाने वाली माताओं को सम्पूरक आहार दिया जाए, जिसकी व्यवस्था में स्थानीय संस्थाओं, यथा: महिला मंडलों, युवक एवं बालमंगल दलों, पंचायतों, पाठशालाओं आदि को नवजीवन प्रदान करके क्रियाशील बनाना होगा, जिसके लिए जनता एवं जनप्रतिनिधियों के पूर्ण सहयोग की आवश्यकता होगी। बालवाड़ी तथा पाठशालाओं के माध्यम से बच्चों को मध्याह्न भोजन के रूप में सम्पूरक खाद्य प्रदान करने में सम्बन्धित अध्यापकों के अतिरिक्त ग्राम पंचायतों के पदाधिकारी, युवक तथा युवती मंगल दलों के लोग, महिला मंडलों की सदस्याएं तथा अन्य स्थानीय जनसेवी संस्थाओं द्वारा सहयोग प्रदान करना होगा। महिला मंडलों के माध्यम से जरूरतमन्द माताओं तथा शिशुओं को बिना स्थानीय प्रभावशील महिलाओं एवं अन्य सामाजिक प्रतिष्ठा प्राप्त व्यक्तियों के सहयोग के सम्पूरक आहार प्रदान करने की व्यवस्था समुचित ढंग से संचालित नहीं हो सकेगी।

सामूहिक रूप से फलदार वृक्ष लगाने, शाकसब्जी उत्पादन, कुक्कुट पालन, मत्स्यपालन आदि के साथ भोजन सम्बन्धी आदतों में परिवर्तन लाने के लिए पोषण शिक्षा के निमित्त प्रदर्शन आयोजन में बिना सभी के सक्रिय सहयोग के वांछित उपलब्धि न प्राप्त होगी। व्यक्तिगत स्तर पर भी लोगों को पोषाहार की आवश्यकता को समझकर पौष्टिक, शरीरवर्धक एवं शरीर रक्षक स्थानीय खाद्य वस्तुओं के उत्पादन, उपभोग एवं आवश्यकता से अधिक उत्पादित वस्तुओं को गैरमौसम में प्रयोग करने के निमित्त सुरक्षित रखने आदि को बढ़ावा देकर अपनी आवश्यकता एवं उपलब्धि के अनुसार आहार-सम्बन्धी आदतों में सुधार करना होगा।

पोषाहार की कमी को पूरा करने के लिए स्थानीय तौर से अधोलिखित व्यावहारिक उपायों को सतत अपनाने की आवश्यकता होगी।

(1) हरी शाक-सब्जियों तथा मौसमी फलों के उत्पादन पर विशेष बल दिया जाता रहे। विशेष रूप से हरे पत्तों वाले साग तथा शीघ्र फल देने वाले स्थानीय फल-वृक्षों यथा केला, पपीता, करौंदा, नींबू, अमरूद, आंवला आदि उगाए जाएं। इनसे आहार में विटामिनों तथा खनिज तत्वों की कमी न होने पाएगी।

(2) खाद्यान्नों के अन्तर्गत अनाजों के उत्पादन के साथ दालें, दलहन, तिलहन तथा गिरियों के उत्पादन को विशेष रूप से बढ़ाया जाए, जिससे शाकाहरियों के लिए प्रोटीन युक्त पोषाहार उपलब्ध हो सके।

(3) कुक्कुट पालन, मत्स्यपालन तथा दुग्ध उत्पादन को अपनाकर पोषाहार की कमी को सुलभाया जा सकता है। घर पर ही अपने उपयोग के लिए छोटे स्तर पर कम स्थान में डीपलिटर विधि से मुर्गीपालन करके अण्डे के रूप में मिलावट रहित शुद्ध, पौष्टिक एवं स्वादिष्ट आहार की व्यवस्था कर सकते हैं। आर्थिक दृष्टि से भी इसे सहयोगी धन्धे के रूप में अपनाया जा सकता है। सार्वजनिक तथा व्यक्तिगत तालाबों में मछली पालन करके कम समय के अन्दर अधिक मात्रा में बिना अधिक लागत लगाए पौष्टिक आहार प्राप्त किया जा सकता है। दुग्ध की व्यवस्था तो किसी न किसी रूप में होनी आवश्यक होती ही है। इसे कृषक खेती के साथ सहायक धन्धे के रूप में अवश्य अपनाएं।

पोषाहार-शिक्षा

समुचित मात्रा में खाद्य वस्तुओं का उत्पादन करके तथा उसकी वितरण व्यवस्था को आवश्यकतानुसार सुनियोजित करके लोगों को भरपेट भोजन तो दिया जा सकता है, परन्तु पोषाहार शिक्षा के बिना कुपोषण के कुपरिणामों से जनसाधारण को मुक्ति दिलाना सम्भव नहीं। अतः पूरक-आहार वितरण व्यवस्था को पोषाहार शिक्षा से सम्बद्ध करना होगा। लोगों को पोषाहार सम्बन्धी व्यावहारिक जानकारी करानी होगी। हम सभी नित्य भोजन करते हैं, परन्तु हममें से बहुत कम ऐसे लोग होंगे जो यह विचार कर भोजन करते हैं कि उन्हें किस प्रकार के आहार की आवश्यकता है, वह आहार उनकी दैनिक आवश्यकताओं को कहां तक पूरा कर सकेगा, उतनी ही ताकत में वे अपने आहार को कैसे नियोजित करें कि अपेक्षाकृत अधिक पौष्टिक एवं सन्तुलित आहार की उपलब्धि सम्भव हो सके आदि।

पोषाहार के आधारभूत नियमों की सामान्य जानकारी भी यदि जनसाधारण को हो जाए, तो उन्हें जो कुछ भी सहज सुलभ है उसी का सदुपयोग हो सके। कोई जानते हुए व्याधियों को नहीं बुलाता। किन्तु अज्ञानतावश अधिकांश लोग स्थानीय सहज सुलभ खाद्य वस्तु को उनके पोषण मूल्यों की जानकारी न होने के कारण कुपोषण सम्बन्धी अनेक रोगों से पीड़ित रहते हैं। जो कुछ खाने में प्रयोग करते हैं उनके अधिकांश पौष्टिक अंशों को अज्ञानता के कारण नष्ट कर डालते हैं, जिन्हें बिना किसी अतिरिक्त प्रयास के केवल प्रयोग करने के तरीकों एवं अपनी आहार सम्बन्धी आदतों में परिवर्तन करके प्राप्त किया जा सकता है।

अधिकांश भारतीय घरों में भोजन पकाने का कार्य स्त्रियां ही करती हैं। महिला मंडलों के सुदृढ़ एवं कार्यशील होने से उनके माध्यम से जरूरतमन्द माताओं तथा बच्चों को सम्पूरक आहार वितरण में सहायता तो मिलेगी ही उनके माध्यम से स्त्रियों को सुधरे हुए ढंग से भोजन पकाने की विधियों का ज्ञान कराया जा सकता है, उन्हें बच्चों के उचित पालन-पोषण की जानकारी दी जा सकती है तथा उनको अपने और अपने परिवार वालों के लिए समुचित आहार-व्यवस्था की ओर जागरूक बनाया जा सकता है। आंगन बाड़ी में मौसमी सब्जियां थोड़ा प्रयास करने पर सरलता से उगाई जा सकती हैं, घर के आंगन अथवा उसके निकट पड़ी बेकार भूमि पर केला, पपीता, नींबू आदि के फलदार पौधे गृहिणयों द्वारा उगा लेना कोई मुश्किल काम नहीं है। घर के छप्परों पर लौकी, कद्दू, तोरई आदि की बेलें फैला कर अपने प्रयोग के लिए पर्याप्त सब्जियां प्राप्त की जा सकती हैं। चाहें तो अपने खाली समय का सदुपयोग कुक्कुट पालन, गाय-भैंस पालन आदि के कामों में कर सकती हैं, जिससे पोषक आहार उपलब्ध होने के साथ घर की आर्थिक स्थिति में भी सुधार लाया जा सकता है। ग्रामीण तथा पिछड़े हुए इलाकों की महिलाओं को मेहनत का काम करने में लज्जा या संकोच नहीं होता, उनके मध्य आवश्यकता है उन्हीं के सामाजिक पर्यावरण में काम करके ठोस व्यावहारिक आधार पर उनकी अनुभूत आवश्यकताओं के अनुसार वैज्ञानिक दिशा प्रदान करने की।

इसी प्रकार युवक मंगल दलों के सदस्यों, युवती मंडलों की सदस्याओं, पाठशाला जाने वाले बच्चों में शाक-सब्जी तथा फल उत्पादन, कुक्कुट तथा मत्स्यपालन आदि कार्यक्रमों के प्रति अभिरुचि पैदा करके अपनी व्यवस्था आप करने की जिम्मेदारी लाई जा सकती है। उनको सम्पूरक आहार व्यवस्था द्वारा पोषाहार प्रदान करने के साथ आहार सम्बन्धी नियमों की जानकारी भी कराई जाए। इसके लिए शासकीय कर्मचारियों से कहीं अधिक महत्वपूर्ण भूमिका उनके शिक्षकों, अभिभावकों तथा उन लोगों की होगी जिनके मध्य उनका अधिकांश समय व्यतीत होता है।

उपरोक्त पोषाहार सम्बन्धी संक्षिप्त विवेचन से हम इस निष्कर्ष पर पहुंचते हैं कि कुपोषण के कुप्रभाव से बचने के लिए जन साधारण में आहार व्यवस्था के प्रति जागरूकता लाने की आवश्यकता है, जिसके लिए चलाए जाने वाले राष्ट्रीय न्यूनतम आवश्यकता कार्यक्रम में पूर्ण जन सहयोग अपेक्षित होगा।

ऊर्जा और खाद के लिए गोबर गैस संयन्त्र

एस० डी० राय

तेल के मूल्य में अप्रत्याशित वृद्धि के कारण एक ओर जहां औद्योगिक क्रान्ति में बाधा पड़ी है वहां दूसरी ओर हरित क्रान्ति भी प्रभावित हुई है। तेल की कमी के कारण कृषि उपयोग की मशीनें, जैसे डीजल पम्प, ट्रैक्टर, पावर टिलर समय पर काम नहीं कर पाएंगे, रासायनिक खादें, जो नेप्था से तैयार की जाती हैं, मंहगी पड़ेंगी तथा कमी के कारण उत्पादन भी कम होगा। इस प्रकार अन्न की उपज पर लागत खर्च बढ़ जाएगा। तेल तथा गैस की कमी के कारण घरेलू उपभोग के लिए गैस से जलने वाले चूल्हे, स्टोव तथा प्रकाश के लिए ईंधन की कमी का सामना करना है। गोबर गैस संयन्त्र से प्राप्त ईंधन से प्रकाश तथा शक्ति एवं खाद प्राप्त किया जा सकता है और भारतीय किसान कठिनाइयों पर आसानी से विजय प्राप्त कर सकते हैं।

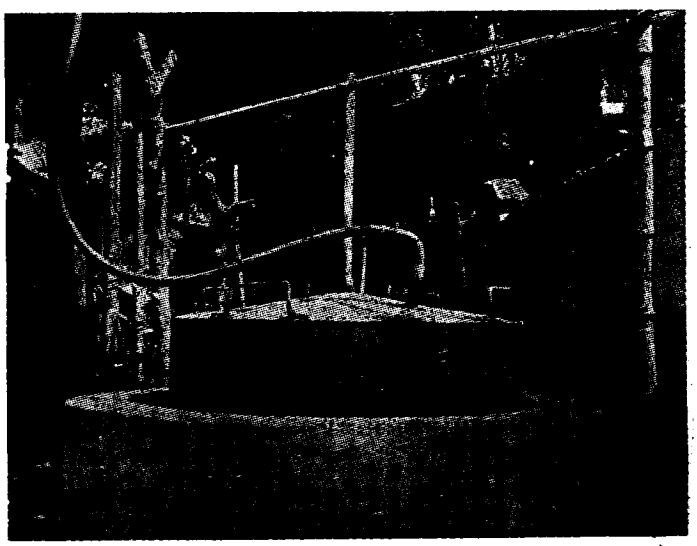

मकान के पिछवाड़े में लगा गोबर गैस संयन्त्र

भारत में पशुधन से प्राप्त लगभग 40 करोड़ टन गोबर उपले बनाकर घरेलू ईंधन के लिए चूल्हों में झोंक दिया जाता है। इसके अतिरिक्त, ईंधन की कमी को पूरा करने के लिए 10 करोड़ टन लकड़ी का भी प्रतिवर्ष जलाने के रूप में प्रयोग किया जाता है। जलाई गई लकड़ी और उपलों से प्राप्त राख खेती योग्य खाद के रूप में इस्तेमाल नही हो सकती। लगातार पेड़ों को काटकर जलाने तथा अन्य कामों में प्रयोग करने के कारण वनों के क्षेत्रफल में कमी हो रही है जिसका वर्षा पर असर पड़ा है तथा भूक्षरण भी होता है। यदि जलाने में प्रयुक्त होने वाले गोबर को खाद के रूप में प्रयुक्त किया जाए तो एक करोड़ टन अतिरिक्त

अनाज पैदा किया जा सकता है और बाहर से अन्न आयात करने की आवश्यकता नहीं पड़ेगी। पांचवी पंचवर्षीय योजना में कृषि में 4.7 प्रतिशत विकास की दर प्राप्त करने में कोई दिक्कत नहीं होगी।

गोबर गैस संयन्त्र जो आसानी से तैयार किया जा सकता है, किसानों के लिए भी बहुत उपयोगी है। इससे खाद एवं उर्जा दोनों की समस्या हल हो सकती है। गोबर को यदि उपला बनाकर जलाया जाए तो खाद नहीं प्राप्त किया जा सकता और यदि इसका खाद के रूप में प्रयोग किया जाए तो ऊर्जा नहीं प्राप्त की जा सकती लेकिन गोबर गैस संयन्त्र से दोनों प्राप्त किए जा सकते हैं। इस संयन्त्र से प्राप्त गैस से साधारण उपले की गरमी से 20 गुना ज्यादा तथा कम्पोस्ट खाद मे जहां .75 प्रतिशत नत्रजन पाया जाता है वहां संयन्त्र की खाद 1.5 प्रतिशत नत्रजन प्राप्त होता है तथा खाद भी 43 प्रतिशत ज्यादा मिलती है। गैस से कृषि के काम में आने वाली मशीनें चलाई जा सकती हैं तथा उसका उपयोग रोशनी के लिए भी किया जा सकता है। सबसे खूबी इस संयन्त्र से प्राप्त गैस के उपयोग में यह है कि जलते समय धुआं नहीं होता और रसोई तथा कमरों की दीवारें आदि गन्दी नहीं होतीं। गोबर गैस संयन्त्र से तैयार खाद साधारण खाद से बढ़िया होती है, मिट्टी के बड़े कणों को आपस में जोड़ने का कार्य करती है जिससे जमीन की ऊपरी सतह का खाद पानी के साथ नीचे की ओर बह कर नहीं जाता तथा भूमि की जल संधारण की शक्ति बढ़ जाती है। चिकनी मिट्टी के बारीक कणों को अलग कर वायु संधारण की शक्ति बढ़ाती है। अच्छी तथा सड़ी खाद होने के कारण खेतों में खरपतवार कम उगते हैं और दीमक भी कम लगती है। गोबर गैस संयन्त्र लगाने वाले किसान के पास कम से कम पांच पशु अवश्य होने चाहिए। पांच पशुओं से औसतन 45 किलोग्राम गोबर प्राप्त किया जा सकता है। इतने गोबर से सबसे छोटा 60 घनफुट वाला संयन्त्र बैठाया जा सकता है जो एक नियोजित परिवार के लिए जलाने तथा रोशनी करने के लिए काफी होगा तथा वर्ष में 7 गाड़ी बढ़िया कम्पोस्ट देगा।

गोबर गैस संयन्त्र बनाना बहुत आसान भी है। इसके दो भाग होते है। डायजेस्टर और गैस पात्र। डायजेस्टर बनाने के लिए पर्याप्त जमीन की जरूरत होती है लेकिन यह किसी कुए के पास नहीं बनना चाहिए। यदि जगह न हो तो कुएं से कम से कम 15 मीटर दूरी अवश्य होनी चाहिए। संयन्त्र ऐसी जगह लगाना चाहिए जहां से गैस प्रयोग में लाने वाली दूरी 100 फीट से अधिक न हो। डायजेस्टर दरवाजे के बगल में भी लगा सकते हैं क्योंकि उससे दुर्गन्ध फैलने और मच्छर मक्खी बैठने का डर नहीं रहता। डायजेस्टर पशुओं की संख्या पर 12 से 20 फीट गहरा तथा 4 से 12 फीट व्यास वाला हो सकता है। जिन पशुओं का गोबर प्रयुक्त किया जाएगा उनके तीन दिन बाद के गोबर की औसत निकाल कर संयन्त्र बनाना अच्छा होता है। इससे गैस पात्र के फटने का डर भी नहीं रहता।

डायजेस्टर की भीतरी दीवारें, जो कुएं जैसा होता है, सीमेण्ट की बनी होती हैं। इस कुएं को दो भागों में बांटने के लिए एक विभाजक दीवार उठाते हैं जो कुएं की सतह से कुछ नीचे ही रहती है और गोबर के मिश्रण में डूबी रहती है। प्रत्येक खंड में एक सीमेंट की नली लगाई जाती है जिसका निचला सिरा कुएं में जमीन के थोड़ा ऊपर तथा ऊपर वाला मुंह कुएं की दीवार के बगल में खुलता है। एक पाइप से गोबर पानी का मिश्रण डाला जाता है और दूसरी पाइप से प्रयोग किया हुआ पहले का मिश्रण बाहर आता है। गोबर का मिश्रण बनाने के लिए ताजे गोबर में पानी का अनुपात 4 और 5 का रहता है। पानी को गोबर में डालकर पतला करते हैं और पहले से डायजेस्टर में लगे सीमेण्ट के पाइप के द्वारा डालते हैं।

गैस पात्र जो शीशी पर लगे ढ़क्कन की तरह डायजेस्टर पर औंधे लगा रहता है, इस्पात का बना रहता है, हमेशा गोबर के मिश्रण में डूबा रहता है और कुएं में लगी जीन पर टिका रहता है। कुएं से गैस के बुलबुले उठते हैं और गैस पात्र में इकट्ठा होते रहते हैं। जैसे-जैसे गैस गैस-पात्र में इकट्ठी होती जाती है, पात्र ऊपर उठता जाता है। पात्र से पतली नली निकाल कर उसे नियत स्थान पर पहुंचा दिया जाता है जहां इसे रोशनी, ईधन या हल्के मशीनों के कार्य में लाते हैं। गोबर गैस संयन्त्र में ध्यान रखना चाहिए कि गैस निकास पाइप पतला रहे ताकि दबाव बना रहे। संयन्त्र का आकार और डिजाइन सावधानीपूर्वक बनाना चाहिए। इस प्रकार बना संयन्त्र 30 वर्ष तक काम देता रहेगा तथा डायजेस्टर ऐसा होना चाहिए जिसमें 50 दिन का मिश्रण समाता रहे। □

क्या आप जानते हैं ?

डेरी विकास कार्यक्रम

सरकार ने चौथी पंचवर्षीय योजना के दौरान ग्रामीण क्षेत्रों में डेरी और मवेशी विकास कार्यक्रम शुरू करने के लिए कदम उठाए हैं। ये कार्यक्रम पांचवी पंचवर्षीय योजना मे भी जारी रहेंगे।

इन परियोजनाओं में विदेशी पशुओं की मदद से दो नस्ली पशुओं के प्रजनन, वीर्य बैंकों की स्थापना तथा कृत्रिम गर्भाधान की सुविधाओं की व्यवस्था होगी।

अब तक विभिन्न राज्यों में ऐसे 52 केन्द्र स्थापित किए जा चुके हैं।

पांचवीं पंचवर्षीय योजना में 51 अतिरिक्त केन्द्र स्थापित करने का लक्ष्य रखा गया है।

प्रमुख ग्रामीण योजनाओं के द्वारा भी पशु और डेरी विकास कार्यक्रम के लिए सहायता दी जाती है। आजकल 622 ग्रामीण खण्ड काम कर रहे हैं तथा उनकी संख्या 713 तक बढ़ाने का प्रस्ताव है।

ग्रामीण रोजगार योजना

एक वरदान

टी० सी० पाण्डे

ग्रामीण रोजगार की जोरदार योजना का उद्देश्य श्रम-प्रधान परियोजनाएं चलाकर देश के हर जिले में रोजगार के अवसर पैदा करना और स्थानीय विकास योजनाओं के माध्यम से टिकाऊ परिसम्पत्तियां पैदा करना है।

योजना का लक्ष्य प्रत्येक जिले में एक वर्ष में 300 दिनों के लिए कम से कम 1,000 व्यक्तियों को रोजगार उपलब्ध कराने का था। देश में कुल 355 जिले हैं और इस प्रकार 3,55,000 लोगों को 300 दिनों के लिए अर्थात् 10,65,00,000 जनदिनों का रोजगार देने का लक्ष्य था। इस योजना को पूर्णतया केन्द्रीय क्षेत्र योजना का रूप दिया गया था और इसके लिए 50 करोड़ रुपये की राशि का प्रावधान रखा गया था, जो पूरी तरह से भारत सरकार द्वारा वहन किया जाना था। यह योजना 1971-72 में एक तीन-वर्षीय योजना के रूप में शुरू की गई थी। पिछले दो वर्षों की प्रगति और सितम्बर, 1973 के अन्त तक की प्रगति नीचे दी जा रही है :—

(i) निधि का आबण्टन, व्यय और रोजगार

वर्ष	निधि का आबण्टन (लाख रुपयों में)	दी गई राशि (लाख रुपयों में)	किया गया वास्तविक व्यय (लाख रुपयों में)	पैदा किया गया रोजगार (लाख जनदिनों में)
1971-72	5,000.00	3,373.43	3,116.58	789.66
1972-73	4,885.00	4,711.395 (बाद में 5,040.745 हो गया)	5,339.57	1,322.51
1973-74 (30-9-73 तक)	4,745.55	1,595.74	976.13	256.31

(ii) 1971-72 और 1972-73 की अवधि में पूरे किए गए विभिन्न कार्य :—

कृषि उत्पादन	1971-72 (हैक्टेयर)	1972-73 (हैक्टेयर)
(क) लघु सिंचाई कार्य	54,243	55,407
(ख) भूमि सुधार	5,024	8,236
(ग) मिट्टी संरक्षण	9,318	1,362
(घ) जल संरक्षण और भूमिगत जल का पुनः संचार	65	1,344
(ङ) भूमि द्वारा सोखे जाने वाले जल का संरक्षण	5,872	10,135
(च) बाढ़ संरक्षण	37,432	56,341
(छ) नाली बनाना और पानी खड़ा होने से रोकना	30,896	22,081
(ज) सामुदायिक बगीचा	157	243
(झ) पंचायती भूमि सुधार	279	84
(ञ) मत्स्यपालन के लिए तालाबों का निर्माण	718	1,015
संचार :		
(क) सड़कें	27,779 किलोमीटर	22,844 किलोमीटर
(ख) पुलिया	कुल 1,445	कुल 3,111

ग्रामीण रोजगार की जोरदार योजना से क्षेत्रीय कार्यकर्त्ताओं को ग्रामीण विकास के लिए सामुदायिक विकास कार्यक्रमों के अन्तर्गत बेरोजगार जनशक्ति का उचित उपयोग करने तथा उन्हें उत्पादक और निर्माणात्मक कार्यों में लगाने की दिशा में सफल अनुभव हुआ है।

ग्रामीण रोजगार की इस जोरदार योजना का प्रभाव ज्ञात करने के लिए कुछ कृषि-आर्थिक अनुसन्धान केन्द्रों और अनुसन्धान संस्थाओं को जिम्मेदारी सौंपी गई थी।

डा० महेश टी० पाठक और डा० अरुण पटेल, गुजरात में बल्लभ विद्यानगर के सरदार पटेल विश्वविद्यालय के अर्थशास्त्र विभाग के अध्यक्ष, ने बताया कि ग्रामीण रोजगार की जोरदार योजना, सूखाग्रस्त क्षेत्र कार्यक्रम, समेकित बारानी कृषि विकास कार्यक्रम, सीमान्त कृषक और कृषि श्रमिक एजेंसी, लघु कृषक विकास एजेंसी और प्रायोगिक सघन ग्रामीण रोजगार परियोजना आदि अनेक परियोजनाएं चलाई जा रही हैं। परियोजनाएं सीधे या अन्य माध्यम से ग्रामीण क्षेत्रों में अतिरिक्त रोजगार मुहैया करेंगी। लघु कृषक विकास एजेंसी और समेकित बारानी कृषि विकास कार्यक्रम विशेष वर्गों के लिए हैं, अतः यह जरूरी है कि लक्ष्य प्राप्त करने के लिए उचित प्रशासनिक व्यवस्था की जाए। सूखाग्रस्त क्षेत्र कार्यक्रम, ग्रामीण रोजगार की जोरदार योजना और सीमान्त कृषक और कृषि श्रमिक एजेंसी आदि तो निर्धन ग्रामीणों को सीधे रोजगार देने के लिए हैं अतः इन सबके लिए एक कार्यक्रम तैयार किया जा सकता है।

उन्होंने यह भी देखा है कि ग्रामीण रोजगार की जोरदार योजना के अन्तर्गत चुने गए क्षेत्र अपेक्षाकृत पिछड़े थे और किसी भी काम की पुनरावृत्ति नहीं की गई थी। इस योजना के अन्तर्गत रखे गए मजदूर अपढ़ और गरीब थे तथा उन्हें रोजगार की बहुत आवश्यकता थी, पर योजना ने बेरोजगारी खत्म करने की दिशा में बहुत ही कम काम किया है। योजना का अनुभव यही रहा है कि जहां जिला और खण्ड कार्यकर्त्ता सजग और प्रयत्नशील रहे वहां अच्छे परिणाम प्राप्त हुए हैं।

राजस्थान के अध्ययन दल में राजस्थान विश्वविद्यालय के अर्थशास्त्र विभाग की अध्यक्षा श्रीमती कान्ता आहूजा थीं। उन्होंने भी कहा कि रोजगार दिलाने के उद्देश्य से चलाई जाने वाली सभी योजनाएं मिलाकर एक विकास अभिकरण बनाया जाए और जिला प्रशासन तथा तकनीकी विभागों को अलग-अलग जिम्मेदारियां देना बन्द कर दिया जाए। योजनाएं लागू करने के लिए बनाए गए अभिकरणों में योजनाएं बनाने के लिए और उनके सही संचालन के लिए तकनीकी स्टाफ होना चाहिए। उन्होंने यह सुझाव भी दिया कि ग्रामीण रोजगार योजना और शिक्षित रोजगार योजना को मिला दिया जाए।

बिहार राज्य में पटना स्थित समाजशास्त्र के ए०एन०एस० संस्थान में अर्थशास्त्र के आचार्य श्री प्रधान एच० प्रसाद मुंगेर जिले में ग्रामीण रोजगार की जोरदार योजना के अन्तर्गत चल रही परियोजनाओं का अध्ययन करके इस नतीजे पर पहुंचे कि इन क्षेत्रों में विद्यमान गरीबी का कारण रोजगार के अवसरों में कमी होना नहीं बल्कि ग्रामीण ढांचे में व्याप्त शोषण की प्रवृत्ति है। उन्होंने यह भी कहा कि लोग भारी संख्या में अतिरिक्त समय में काम करने को तैयार हैं, जिससे पता चलता है कि वहां अर्ध-रोजगार की स्थिति है और इसके बावजूद केवल रोजगार देकर ही गरीबी की समस्या को समाप्त नहीं किया जा सकता।

टिकाऊ हल

श्री जे० आर० गुप्ता तथा श्री एस० एस० जोहर ने पंजाब में गुरदासपुर जिले में अध्ययन किया। उनका मत है कि ऐसे समय में जबकि फसल अच्छी नहीं हुई, इस योजना के अन्तर्गत बहुत लाभदायक रोजगार उपलब्ध कराया गया। ग्रामीण रोजगार की जोरदार योजना पूरे जिले में सफल रही है तथा विशेषकर कम-विकसित पहाड़ी इलाकों में इस योजना से बहुत लाभ हुआ है। उन्होंने यह ज्ञात किया कि यद्यपि ग्रामीण मजदूर बेरोजगार नहीं तथापि मौसम के बाद की अवधि में वे काफी समय बेरोजगार रहते हैं। उन्हें मुश्किल से साल में 150 दिन काम मिलता है। अध्ययन दल ने सिफारिश की है कि बेरोजगारी और अर्धरोजगारी की समस्या को हल करने के लिए टिकाऊ रोजगार उपलब्ध कराने होंगे।

उड़ीसा राज्य के अध्ययन दल में श्री वैद्यनाथ मिश्र, परियोजना निदेशक; श्री प्रफुल्ल कुमार दास, परियोजना अधिकारी तथा कृषि व तकनीकी विश्वविद्यालय, उड़ीसा के कृषि-अर्थशास्त्र के वरिष्ठ अनुसन्धान अधिकारी श्री रमाकान्त दास थे और उन्होंने धेनकनल जिले में अध्ययन किया। उन्होंने कहा है कि उपलब्ध कराए गए अतिरिक्त रोजगार को देखते हुए जिले में यह योजना काफी सफल रही है। हां, पैसे की कमी आ जाने और निर्धारित राशि प्राप्त न हो पाने के कारण परियोजनाएं अधिक समय तक नहीं चलाई जा सकीं।

केरल राज्य के सबसे घनी आबादी वाले एलेप्पी जिले में कृषि मजदूरों की संख्या काफी है। वहां का अध्ययन कार्य त्रिवेन्द्रम के केरल विश्वविद्यालय के अर्थशास्त्र विभाग के श्री एम० ए० ऊमेन ने किया और उनके विचार से वहां के मजदूरों ने रोजगार योजना में भरपूर सहयोग इसलिए दिया कि उन्हें भी घर के पास ही काम मिल गया।

पश्चिम बंगाल के लिए चुने गए अध्ययन दल में परियोजना इंचार्ज श्री एम० जी० घोष तथा विश्वभारती, शान्तिनिकेतन के कृषि-अर्थशास्त्र अनुसन्धान केन्द्र के अन्य सदस्य थे। उन्होंने बांकुरा जिले में अपना अध्ययन कार्य किया जहां यह योजना पिछले लगभग एक वर्ष से चलाई जा रही है। उन्होंने कहा कि यहां रोजगार योजना के अन्तर्गत काफी लोगों को काम की जगह से एक-दो किलोमीटर दूर से लिया गया। उनमें से अधिकतर खेतिहर मजदूर थे जिन्हें नियमित रूप से काम दिया गया। हां, जुलाई और दिसम्बर में खेती का काम बहुत ज्यादा होने के कारण योजना पर काम बन्द रहा। उन्होंने सुझाव दिया कि बहुफसली कार्यक्रम चलाने और कृषि उत्पादन बढ़ाने के लिए किए जा रहे प्रयासों के साथ-साथ ग्रामीण रोजगार की जोरदार योजनाओं को भी चलाया जाए तो काफी योग मिल सकता है। उन्होंने यह भी पता लगाया कि ग्रामीण रोजगार योजना को

सीमान्त कृषक और खेतिहर मजदूर योजना तथा अन्य विकास योजनाओं के साथ समन्वित करके अधिक अच्छे परिणाम प्राप्त किए जा सकते हैं।

महाराष्ट्र में पूना स्थित गोखले राजनीति तथा अर्थशास्त्र संस्थान के कृषि-अर्थशास्त्र अनुसन्धान के श्री डी० पी० आप्टे ने सतारा जिले में ग्रामीण रोजगार योजना की समीक्षा की। उन्होंने कहा कि योजना के अन्तर्गत 1,000 व्यक्तियों के लिए अतिरिक्त रोजगार उपलब्ध कराके समस्या को हल करने के लिए अच्छा प्रयास किया गया है। पर, उन्होंने यह भी कहा कि इस योजना में काम पर लगे कुछ लोगों को वर्तमान कार्यक्रम समाप्त होने पर बेरोजगारी या कम आय जैसी कठिनाइयों का सामना करना पड़ सकता है।

श्री आप्टे ने कहा कि ठीक से चलाए जाने पर ग्रामीण रोजगार योजना से इस क्षेत्र के भूमिहीन मजदूरों व छोटे कृषकों की आय बढ़ाई जा सकती है।

परिवर्तन

मैं अपने सन्तोष के लिए नहीं कहता पर असम, मेघालय, तमिलनाडु, केरल, आन्ध्र प्रदेश, गुजरात, उत्तर प्रदेश और राजस्थान के 40 से अधिक जिलों का दौरा करने के बाद मैं इसी नतीजे पर पहुंचा हूं कि ग्रामीण रोजगार योजना महत्वपूर्ण रूप से सफल रही है। राज्य स्तर के उच्च अधिकारी, जिला अधिकारी, विभिन्न स्तर की पंचायती राज संस्थाओं के सदस्य, समाजसेवक और ग्रामीणों की राय में ग्रामीण रोजगार योजना उपयोगी रही है। उनकी यह शिकायत थी कि सामुदायिक कार्यक्रमों में बड़ी जल्दी परिवर्तन किए जाते हैं। यहां तक कि लोगों के इन कार्यक्रमों को समझने और अपनाने से पहले ही इनमें फेरबदल कर दिए जाते हैं या इन्हें बन्द कर दिया जाता है। यही स्थिति ग्रामीण रोजगार योजना की भी है और अभी लोग इसे समझे हैं। यदि इसे भी समाप्त कर दिया गया तो यह जल्दबाजी का एक और उदाहरण होगा। □

निरुपयोगी वस्तुओं से धनोपार्जन

नारायण प्रसाद शर्मा

आज देश आर्थिक संक्रमण की स्थिति से गुजर रहा है। एक ओर देश के नवनिर्माण हेतु भगीरथ प्रयास किए जा रहे हैं तो दूसरी ओर हम अपने समग्र संसाधनों का पूर्ण उपयोग नहीं कर रहे हैं। जिन अनेक वस्तुओं को हम निरुपयोगी समझते हैं, उनसे न केवल धनार्जन किया जा सकता है अपितु लाखों लोगों को रोजगार प्रदान किया जा सकता है।

संसार के अन्य देशों की तुलना में हमारे यहां पशुओं की संख्या सर्वाधिक है, जिनके गोबर, मूत्र, हड्डियों, खालों एवं मांस के समुचित उपयोग न करने से करोड़ों रुपये की बहुमूल्य सम्पत्ति प्रति वर्ष नष्ट हो जाती है। देश में प्रति वर्ष 66.7 लाख टन अखाद्य तेल बीज पैदा होते हैं, जिनमें से खादी ग्रामोद्योग योजनाओं के अन्तर्गत केवल 1.8% बीजों का ही उपयोग हो पा रहा है। शेष 98.2% बीजों का कोई भी उपयोग नहीं किया जा रहा है। इसी तरह ताड़ गुड़ एवं हस्त निर्मित कागज के क्षेत्र में वृहद् उन्नयन की सम्भावनाएं हैं। इनके पूर्ण उपयोग से देश में व्याप्त उपभोग वस्तुओं के अभाव को भी काफी सीमा तक दूर किया जा सकता है।

संक्षेप में इन वस्तुओं के सदुपयोग पर अग्रांकित पंक्तियों में प्रकाश डाला गया है :—

मृत पशु शवों का उपयोग :— सन् 1966 की पशु गणना के अनुसार देश में 34.4 करोड़ पशु है जिनमें से 17.6 करोड़ गाय-बैल हैं और 5.3 करोड़ भैंसें। प्रति वर्ष 2 करोड़ से अधिक पशु मरते हैं। ग्रामीण अंचलों में प्रायः पशुओं की खालें निकाल कर शेष भाग को चीलों एवं गिद्धों के आहार के लिए छोड़ दिया जाता है। इससे प्रतिवर्ष करीब 10 करोड़ रुपये की सम्पत्ति का नुकसान होता है। इसके अतिरिक्त आसपास का वातावरण भी दूषित होता है। इसलिए वैज्ञानिक ढंग से शवच्छेदन किया जाना चाहिए। हड्डियों से खाद, मांस से मुर्गियों का दाना एवं खुरों से नीट फूट तेल प्राप्त होता है, जिसका उपयोग घड़ियों में तेल देने में किया जा सकता है।

अखाद्य तेल के बीज :— हमारे यहां नीम, करंज, अरंडी, पीलू, पीसा एवं महुआ के वृक्ष बहुतायत में उपलब्ध हैं। यदि देश में केवल निबोलियों को ही ठीक ढंग से एकत्रित किया जाए तो इतना अधिक नीम का तेल तैयार हो जाएगा कि देश के साबुन उद्योग की जरूरत को पूरा किया जा सकेगा। निबोली में 23.5% तेल पाया जाता है। यदि प्रतिवर्ष 150 लाख मन निबोलियां इकट्ठी कर तेल निकाला जाए तो 2 लाख से अधिक व्यक्तियों को आंशिक एवं 20 हजार व्यक्तियों को पूर्ण समय का रोजगार प्रदान किया जा सकता है। रोजगार प्रदान करने के अलावा नीम का तेल करीब 2 रु० किलो पड़ता है जिससे यदि साबुन बनाया जाए तो निस्न्देह सस्ता पड़ेगा।

(4) **हस्त निर्मित कागज** :—इस उद्योग में कपड़े की चिथियां, पुराना कागज, धागा, छाल व कुछ घास प्रयुक्त की जा सकती है। उक्त चीजों का देश में कोई विशिष्ट उपयोग नहीं होता है। हाल ही के कुछ वर्षों में उन्नत किस्म के कागज का निर्माण भी इस विधि से सम्भव हो गया है।

सहकारी संगठनों में श्रमिक अशान्ति पर अंकुश की आवश्यकता

बी० आर० सिंह

सहकारी संस्थाओं के कर्मचारियों की परिस्थितियों के अध्ययन के लिए उन्हें दो प्रमुख भागों में विभाजित किया जा सकता है (1) उत्पादक तथा (2) अनुत्पादक अथवा कल्याणकारी एवं प्रसार कार्यक्रमों को कार्यान्वित करने वाली सहकारी संस्थाएं। उत्पादक सहकारी संस्थाओं में सहकारी बैंकों, नागरिक सहकारी बैंकों, औद्योगिक सहकारी मिलों व समितियों, भूमि विकास बैंकों, विपणन संघों, यातायात समितियों, डेयरी संघों आदि उन संगठनों को शामिल किया जा सकता है जो कि अपने आवश्यक व्यवसाय में लाभ का अर्जन करती हैं। द्वितीय वर्ग के सहकारी संगठनों में सहकारी संघों, जनकल्याण सहकारी संस्थाओं, शिक्षा व प्रशिक्षण के सहकारी संगठनों आदि को रखा जा सकता है, जो कि अपने सामान्य व्यवसाय में किसी लाभ के अर्जन का उद्देश्य नहीं रखते, प्रत्युत् अपने उद्देश्यों की पूर्ति में होने वाले व्यय के लिए शासकीय अनुदान एवं अन्य सहकारी संस्थाओं से प्राप्त चन्दों पर निर्भर रहते हैं।

प्रथम वर्ग के सहकारी संगठनों में कर्मचारियों के हितों की सुरक्षा के लिए उनके अपने श्रमिक संघ बन गए हैं परन्तु द्वितीय वर्ग की सहकारी संस्थाओं में श्रमिक संघों का पूर्ण अभाव है और जहां श्रमिक संघों का निर्माण हुआ भी है, वहां वे असंगठित, अव्यवस्थित एवं सक्षम नेतृत्व से विहीन हैं। उनमें अपने श्रमिकों के हितों की सुरक्षा करने की क्षमता प्रायः नगण्य है। इस कमजोरी के अतिरिक्त द्वितीय वर्ग की सहकारी संस्थाओं के कर्मचारियों की सेवा की शर्तें अत्यन्त अव्यवस्थित और असुरक्षात्मक हैं। अलबत्ता प्रथम वर्ग के सहकारी संगठनों में कर्मचारी सेवा की शर्तें अधिक व्यवस्थित और सुरक्षात्मक हैं। इन दोनों प्रकार की सहकारी संस्थाओं के कर्मचारियों को सुरक्षा प्रदान करने के लिए कोई उचित शासकीय अधिनियम नहीं हैं। मात्र सहकारी अधिनियम में यह व्यवस्था की गई है कि यदि कर्मचारियों की सेवा की शर्तों के सम्बन्ध में कोई विवाद उत्पन्न होता है तो उसे पंजीयक निश्चित करेगा। स्वायत्त संस्थाओं के होते हुए भी इन सहकारी संस्थाओं में कर्मचारियों की नियुक्ति को अनुमोदित करने, शैक्षणिक योग्यता निर्धारित करने, वेतनमान तय करने आदि का अधिकार पंजीयक को ही होता है। सामान्यतया यह पाया जाता है कि इन सभी सहकारी संगठनों में कार्यरत कर्मचारियों के लिए विभागीय अधिकारियों की तुलना में कम वेतनमान रखने का प्रयास किया जाता है। पद के दायित्व, कार्यकुशलता एवं कार्यभार की ओर कोई ध्यान नहीं दिया जाता। विभागीय कर्मचारियों के सदृश इन सहकारी संस्थाओं के कर्मचारियों की मंहगाई क्षति पूर्ति, स्वास्थ्य भत्ता, ग्रेच्यूटी, शहरी भत्ता एवं अन्य सुविधाएं भी प्राप्त नहीं होती जिससे उनमें असन्तोष उत्पन्न होता है। सहकारी संस्थाओं के पदाधिकारियों का न्यस्त स्वार्थ, संस्थाओं के कार्यों में अरुचि होने से कर्मचारियों के साथ उचित न्याय न कर पाना, उनके पक्षपात पूर्ण रवैये से कर्मचारियों के हितों को नुकसान पहुंचना, संस्थाओं के प्रशासनिक व्यवस्था में अपने उत्तरदायित्वों के प्रति उनकी उदासीनता से कर्मचारियों को उचित मार्गदर्शन न मिल पाना, आदि से कर्मचारियों के अपने अधिकारों के प्रति असुरक्षा की भावनाएं उत्पन्न होती हैं, जो कि श्रमिक विवाद का कारण बन जाती हैं। चाटुखोरी एवं मिथ्या प्रदर्शन को प्रोत्साहन मिलने से भी विषम परिस्थितियां उत्पन्न होती हैं, जिनसे भी श्रमिक विवाद उत्पन्न होता है। जिन सहकारी संगठनों में श्रमिक सशक्त हैं उनमें कर्मचारियों के हितों की सुरक्षा के लिए कलम बन्द, धीरे चलो, हड़ताल एवं प्रदर्शन का सहारा व्यापक पैमाने पर लिया जाता है, परन्तु जिन सहकारी संगठनों में या तो श्रमिक संघ हैं ही नहीं और यदि हैं भी तो अत्यन्त असंगठित एवं अक्षम हैं; वहां कर्मचारियों में आन्तरिक कुढ़न उत्पन्न होती है, जिससे संस्था के उद्देश्यों के प्रति असुरक्षा उत्पन्न होती है। दोनों ही स्थितियों में सहकारी संस्थाओं के व्यापक हितों को नुकसान पहुंचता है। कर्मचारियों के शोषण को बढ़ावा मिलता है जो कि सहकारिता के न्यायोचित सिद्धान्त के प्रतिकूल है।

सहकारी सेवा मण्डल

उपरोक्त तथ्यों से स्पष्ट है कि सहकारी संस्थाओं में कार्यरत कर्मचारियों की सेवा शर्तें, उनके हितों की सुरक्षा तथा शासकीय एवं औद्योगिक प्रतिष्ठानों के कर्मचारियों के सदृश प्राप्त होने वाली सुविधाओं की तुलना में परिस्थितियां अत्यन्त विचित्र एवं असन्तोषजनक हैं। जैसा कि पहले उल्लेख किया जा चुका है कि उनके लिए सहकारी अधिनियम के कुछ अव्यवस्थित एवं अपूर्ण सुरक्षात्मक प्रावधानों के अतिरिक्त अन्य किसी प्रकार की वैधानिक संरक्षण की व्यवस्था नहीं है। सहकारी संस्थाओं को भारतीय संविधान में उल्लिखित राष्ट्रीय लक्ष्य 'समाजवादी समाज व्यवस्था की स्थापना' हेतु प्रमुख अभिकरण के रूप में मान्यता दी गई है। देश में शोषण रहित समाज की स्थापना का प्रमुख कार्य इनको सौंपा गया है। यह एक बड़ी विडम्बना है कि आर्थिक सत्ता के विकेन्द्रीकरण एवं शोषणरहित समाजवादी समाज व्यवस्था की

स्थापना में संलग्न सहकारिता आन्दोलन में कार्यरत कर्मचारियों को स्वयं शोषण का सामना करना पड़ रहा है। समुचित वैधानिक सुरक्षा से वंचित वे अपनी मानवीय आवश्यकताओं की पूर्ति के लिए दमघोटू परिस्थितियों में जीवनयापन कर रहे हैं। कमरतोड़ मंहगाई के दैत्य से उनकी सुरक्षा की ओर न तो पंजीयक का ध्यान है और न सहकारी संस्थाओं के पदाधिकारियों का। सशक्त सहकारी श्रमिक संघों के अभाव में वे अपने हितों की सुरक्षा में असहाय हैं।

सहकारिता के क्षेत्र में सशक्त श्रमिक संघों के निर्माण पर बल देने का लेखक का उद्देश्य नहीं है। परन्तु, संगठित सुरक्षा के अभाव में सहकारी संस्थाओं के कर्मचारियों के हितों के संरक्षण के लिए पंजीयक तथा पदाधिकारियों से स्वतन्त्र एक अन्य ठोस व्यवस्था का निर्माण किया जाना सामयिक है ताकि अनवरत कीमत वृद्धि के शोषण से उन्हें राहत दी जा सके और उनके लिए आकर्षक तथा सुरक्षात्मक सेवा की शर्तों को अपनाकर सहकारिता क्षेत्र में श्रमिक अशान्ति पर अंकुश लगाया जा सके। इस सम्बन्ध में लेखक का सुझाव है कि सहकारी संस्थाओं के कर्मचारियों की सेवाओं पर नियन्त्रण रखने के लिए सामाजिक सुरक्षा की वैधानिक व्यवस्था करने, उनकी सेवा की शर्तें निर्धारित करने, उनके हितों की सुरक्षा आदि के लिए प्रान्तीय स्तर पर सहकारी संस्थाओं के समस्त कर्मचारियों के लिए एक "सहकारी सेवा मण्डल" की स्थापना की जानी चाहिए, जिसके नियन्त्रण में कर्मचारियों की सेवाएं, उनकी नियुक्ति, पदोन्नति, निलम्बन, वैधानिक सामाजिक सुरक्षा आदि रहेगी। सहकारी संस्थाओं के पदाधिकारियों तथा पंजीयक को इन अधिकारों में दखल देने का अधिकार नहीं रहेगा। सहकारी सेवा मण्डल कर्मचारियों के पद, पद के उत्तरदायित्व, कार्यभार आदि को ध्यान में रखकर अपने सेवा नियम तैयार कर सहकारी संस्थाओं को देगा, जिसके प्रावधानों का वे पालन करेंगीं। कर्मचारियों के कार्यों पर दैनिक नियन्त्रण सहकारी संस्थाएं रखेंगी, परन्तु उन पर अन्तिम नियन्त्रण रखने का अधिकार सहकारी सेवा मण्डल में निहित होगा।

प्रान्तीय सरकार द्वारा सहकारी सेवा मण्डल की नियन्त्रण कमेटी में निम्न व्यक्तियों को मनोनीत किया जाएगा :—

1. सचिव, सहकारिता विभाग	अध्यक्ष
2. राज्य सहकारी अधिकोष का अध्यक्ष	सदस्य
3. राज्य भूमि विकास अधिकोष का अध्यक्ष	,,
4. राज्य विपणन संघ का अध्यक्ष	,,
5. राज्य सहकारी संघ का अध्यक्ष	,,
6. स्टेट बैंक आफ इण्डिया का एक प्रतिनिधि	,,
7. संयुक्त पंजीयक, सहकारी समितियां	सचिव
8. अन्य सहकारी संस्थाओं का एक प्रतिनिधि	प्रतिनिधि (सदस्य)

"सहकारी सेवा मण्डल" के गठन का सुझाव कोई नवीन योजना नहीं है। उत्तर प्रदेश सरकार 4 अप्रैल 72 को एक विशेष गजट द्वारा सहकारी सेवा मण्डल के गठन, अधिकार, कार्य पालन आदि के सम्बन्ध में जानकारी प्रकाशित कर इस योजना को कार्यान्वित कर चुकी है। इस मण्डल ने 1 जुलाई 73 से अपनी सेवा की शर्तें तैयार कर राज्य सरकार तथा सहकारी संस्थाओं को प्रेषित कर अपना कार्य प्रारम्भ कर दिया है।

मध्य प्रदेश राज्य में सहकारी संस्थाओं के प्रशासनिक, कार्यपालन, लेखापालन, पर्यवेक्षण आदि पदों पर कार्य करने हेतु कर्मचारियों के संवर्ग निर्माण की व्यवस्था की गई है। इस व्यवस्था की प्रगति असन्तोषजनक है। उत्पादक वर्ग की सहकारी संस्थाओं में सिर्फ राज्य सहकारी अधिकोष एवं राज्य सहकारी भूमि विकास अधिकोष द्वारा संवर्ग के निर्माण पर ध्यान दिया गया है। इस वर्ग की अन्य सहकारी संस्थाओं द्वारा पूर्ण उदासीनता बरती जाती है। अनुत्पादक वर्ग की सहकारी संस्थाओं में संवर्ग निर्माण का विषय अभी तक छुआ भी नहीं गया है। भविष्य में भी उनके द्वारा इस विषय में कोई कार्यवाही किए जाने की कोई सम्भावना नहीं है। सहकारी अल्पावधि साख के प्राथमिक स्तर पर समिति व्यवस्थापकों के संवर्ग निर्माण का प्रश्न आर्थिक दिक्कतों का विषय बनाकर अधर में लटका दिया गया है। संवर्ग निर्माण की योजना के माध्यम से सहकारी संस्थाओं के कर्मचारियों के हितों की थोड़ी बहुत संरक्षण की व्यवस्था भी समस्या को छूकर ही रह गई है। ऐसी स्थिति में सभी प्रकार के सहकारी संस्थाओं के कर्मचारियों के लिए सामाजिक सुरक्षा प्रदान करने हेतु "सहकारी सेवा मण्डल" का निर्माण एक विकल्प के रूप में अनिवार्य रूप से आवश्यक हो गया है।

सावधानियां :—"सहकारी सेवा मण्डल" की योजना को कार्यान्वित करते समय सहकारी क्षेत्र में श्रमिक शान्ति को बनाए रखने के उद्देश्य से निम्न सावधानियां बरतना आवश्यक हैं :—

1. सहकारी विभाग एवं सहकारी संस्थाओं के कर्मचारियों के वेतन मान में साधारणतया अन्तर पाया जाता है। कुछ सहकारी संस्थाओं के कर्मचारियों को विभागीय कर्मचारियों की तुलना में अधिक वेतन-प्राप्त होता है। सहकारी सेवा मण्डल को कर्मचारियों का वेतन मान निर्धारित करते समय पद, उससे सम्बन्धित दायित्व तथा कार्यभार को ध्यान में रखते हुए वेतन-मान निर्धारित करना चाहिए और यदि आवश्यक हो तो विभागीय कर्मचारियों की तुलना में अधिक वेतन देने में हिचकिचाहट का अनुभव नहीं करना चाहिए। हर हालत में समान पद, दायित्व एवं कार्यभार वाले पदों के लिए विभागीय कर्मचारियों के समान वेतन-मान निर्धारित करना चाहिए।
2. सहकारी संस्थाओं के कर्मचारियों

के लिए भी विभागीय कर्मचारियों के सदृश स्वास्थ्य भत्ता, शहरी भत्ता, आवास किराया, प्रौविडेंट फण्ड, मंहगाई क्षतिपूर्ति भत्ता, अन्तरिम राहत, वेतन पुनर्निर्धारण, ग्रेच्यूटी आदि, अन्य सुविधाएं देने की व्यवस्था की जानी चाहिए। हर स्तर पर शासकीय कर्मचारियों को प्राप्त सुविधाओं के समान सहकारी संस्थाओं के कर्मचारियों के लिए भी व्यवस्था होनी चाहिए।

3. यदि किसी सहकारी संस्था के कर्मचारियों को शासकीय कर्मचारियों की तुलना में अधिक सुविधा प्राप्त हो रही हैं, तो उनको शासकीय कर्मचारियों को प्राप्त सुविधाओं के स्तर पर लाने हेतु उनमें कमी करने के बजाए उन्हें मान्य करना चाहिए और ऐसी सभी सहकारी संस्थाओं में प्राप्त सुविधाओं को समान रूप से लागू करना चाहिए।
4. सहकारी सेवा मण्डल द्वारा कर्मचारियों के निर्वाचन में सिर्फ उनकी योग्यता, अनुभव, कार्यक्षमता आदि को प्राथमिकता देनी चाहिए और सहकारी संस्थाओं की मांग पर उन्हें योग्य कर्मचारियों की सेवाएं उपलब्ध की जानी चाहिए। भाई-भतीजावाद, सिफारिश, राजनीतिक दबाव एवं अन्य भ्रष्ट तरीकों को सहकारी सेवा मण्डल में कतई प्रवेश नहीं दिया जाना चाहिए। सहकारी सेवा मण्डल अपनी न्यायोचित कार्यप्रणाली से सहकारी संगठनों में उत्पन्न श्रमिक अशान्ति पर अंकुश लगाने में काफी दूर तक समर्थ होगा; ऐसा लेखक का मत है। सहकारी संगठनों के 30 लाख कर्मचारियों की सुरक्षा को अब नजरअन्दाज नहीं किया जाना चाहिए क्योंकि राष्ट्रीय लक्ष्य "समाजवादी समाज की स्थापना" में उन्हें बहुत ही महत्वपूर्ण भूमिका निभानी है। शासकीय और औद्योगिक प्रतिष्ठानों के कर्मचारियों की तुलना में राष्ट्र के निर्माण में सहकारी क्षेत्र के कर्मचारियों का योगदान किसी भी हालत में कम नहीं है। □

नन्दौरा ग्राम के उद्धारक श्री अब्दुल शमी

विजय कुमार जैन

सहकारिता वह सिद्धान्त है जिससे गरीबी दूर की जा सकती है, समाज में समानता लाई जा सकती है और देश को सुख-समृद्धि का आगार बनाया जा सकता है।

नन्दौरा ग्राम मध्य प्रदेश के रायसेन जिले, तहसील गौहरगंज (विकास खण्ड उबैदुल्ला गंज) में भोपाल-बरेली मार्ग पर 43वें किलोमीटर पर स्थित है। प्रकृति की गोद में स्थित यह ग्राम 1901 तक ही आबाद रहा; इस ग्राम को सन् 1927 में हाजी शेख अब्दुल रहीम ने 200 रु० में खरीदा था। उन दिनों अकाल पड़ने के बाद सम्पूर्ण गांव का वैभव लुप्त हो चुका था, यहां तक कि ग्रामवासी गांव छोड़ने के लिए बाध्य हो चुके थे। जंगली जानवरों के भय से पूरा गांव आतंकित था। पर आज श्री शेख अब्दुल शमी (पुत्र श्री हाजी अब्दुल रहीम) ने इस ग्राम का स्वरूप इतना बदल दिया है कि कोई भी व्यक्ति कभी, इस गांव के उजड़ेपन को मानने के लिये तैयार ही नहीं है।

अब श्री अब्दुल रहीम साहब का तो स्वर्गवास हो चुका है किन्तु उनके स्वप्न को पूरा करने का बीड़ा श्री अब्दुल शमी उठाए हुए हैं। वे 70 वर्ष के होने वाले हैं और आज उनकी तन्मयता तथा शारीरिक क्षमता दूसरों को सिखाती है कि कर्मठ व्यक्ति ही सच्ची सुख समृद्धि ला सकता है।

सन् 1953 में विकास खण्ड के नेतृत्व में तेजी से आगे बढ़ने वाला यह ग्राम सहकारिता को अपना कर ही जिला स्तर पर 1961 में विकास कार्य के लिए सर्वप्रथम घोषित हुआ है।

नन्दौरा ग्राम में अधिकांश ग्रामीण आदिवासी हैं। पंचायत नन्दौरा का कार्य सुचारू रूप से चलाने तथा आदिवासियों में जागृति लाने में पंचायत के सरपंच का बड़ा योग है। गांव वालों ने श्री शमी की प्रेरणा से धामधूमर तालाब का निर्माण किया जिससे डंगरवाड़ा, धामधूमर तथा नन्दौरा गांव लाभ उठाते हैं। इस तालाब से सिंचाई की बदौलत ही आज धान की उन्नत जातियां (सावरमती, छत्तरी, आदि) और गेहूं की सुनहरी बालियों वाली उन्नत जातियां सी-306, कल्याण सोना 1593, आदि यहां धरती का शृंगार करती हैं।

इस ग्राम के ग्रामीणों ने श्रमदान द्वारा एक शाला भवन, एक अध्यापक निवासगृह, डेढ़ फर्लांग की सड़क तथा एक काजी हाउस बनवाया और पत्थर की मजबूत चट्टानों को तोड़ कर एक स्वच्छ कुंए का निर्माण किया। 27 दिसम्बर 1960 को डा० शंकरदयाल शर्मा, भूतपूर्व शिक्षा तथा विधि मन्त्री के करकमलों द्वारा डाकखाने का उद्घाटन किया गया। इसी वर्ष ग्राम में श्री अब्दुल शमी के प्रयास से एक सहकारी साख संस्था का भी गठन किया गया। सफाई, स्वास्थ्य और स्वच्छता की दृष्टि से यह गांव एक आदर्श गांव है।

नन्दौरा ग्राम के सभी आदिवासी किसान समय के अनुसार जाग्रत हैं और नए ढंग से खेती करते हैं। ग्राम विकास योजना से इन्होंने काफी लाभ उठाया है और अब इनमें शिक्षा का भी काफी प्रचार है। गांव में न कोई झगड़ा है और कोई फसाद। □

सहकारी समितियां एवं प्रौढ़ शिक्षा

जसवन्त सिंह भण्डारी और
नन्द किशोर पालीवाल

गांवों में सहकारी समितियों को आसानी से ऋण दिलाने वाला एक माध्यम समझा गया है और समितियों के सदस्यों की भी यही आम धारणा है। इस प्रकार की धारणा सहकारिता के सिद्धान्त तथा उसकी शैक्षणिक उपयोगिता, जो कि मुख्य हैं, के एकदम विपरीत है। सहकारी समितियों का उपयोग व्यक्ति की केवल आर्थिक स्थिति सुधारने के लिए नहीं वरन् जीवन के सभी पहलुओं में होना चाहिए जिनमें सहकारिता के प्रशिक्षण तथा शैक्षणिक पहलू मुख्य हैं। शिक्षा के प्रत्यक्ष कार्यक्रमों को चलाने के लिए तो अन्य कई माध्यम हैं पर सहकारी समितियां उनके अतिरिक्त कार्यक्रम अपनाने में सहायक हो सकती हैं। इन अतिरिक्त कार्यक्रमों में प्रौढ़ शिक्षा के कार्यक्रम मुख्य रूप से लिए जा सकते हैं। सी० एफ० स्ट्रिकलेण्ड ने कहा है "जीवन के व्यापार में सहकारिता भी प्रौढ़ शिक्षा है।" हैनरी डबल्यू० वुल्फ के अनुसार "सहकारिता निर्धन लोगों की शिक्षिका होनी चाहिए।" डा० एम० एम० कोडी ने तो यह भी कहा है कि "आर्थिक क्षेत्र में हमने सहकारिता का आश्रय शिक्षा के साधन के रूप में ही लिया है, आर्थिक साधन के रूप में नहीं।" इस प्रकार सहकारी शिक्षा ही प्रौढ़ शिक्षा है और देश की योजनाओं में सहकारी समितियों को प्रौढ़ शिक्षा की एक एजेन्सी भी माना गया है। किन्तु क्या सहकारी समितियां प्रौढ़ शिक्षा के कार्यक्रमों को चलाने में सक्षम हैं या क्या स्वयं सहकारी समितियों के सदस्यों को प्रौढ़ शिक्षा की आवश्यकता है ?

कोई भी कार्यक्रम तभी सफल हो सकता है जबकि उसके चलाने वाले उसमें प्रशिक्षित हों। भारत में सहकारिता आन्दोलन के लक्ष्य ग्रामीण अर्थ व्यवस्था को सुधारने के साथ-साथ गांवों में स्थानीय नेतृत्व, सामाजिक मूल्यों, नैतिक शिक्षा तथा समुदाय की भावना को बढ़ाना भी है। सहकारिता का शैक्षणिक महत्व भी यही है। सहकारिता के सिद्धान्त के प्रवर्त्तक रोशडेल ने भी सहकारिता के शैक्षणिक पहलू पर जोर दिया था। उन्होंने समितियों के लाभ का ढ़ाई प्रतिशत नियमित रूप से शैक्षणिक कार्यक्रमों पर खर्च करने का निश्चय किया था। ब्रिटेन, कनाड़ा, जापान, डेनमार्क आदि देशों में भी सहकारी समितियां अपने ही साधनों द्वारा कई शैक्षणिक कार्यक्रम चलाती हैं। भारत में मेक्लेगन समिति (1915) की रिपोर्ट में भी सहकारी समितियों की विफलता का कारण सदस्यों में शिक्षा का अभाव बताया था। इसी रिपोर्ट में आगे कहा गया था कि समिति के पंजीकरण के पूर्व सदस्यों को सहकारिता के सिद्धान्तों से पूर्ण परिचित करा देना चाहिए। रायल कमीशन आन एग्रीकल्चर (1928) ने भी यही सिफारिश की थी कि सहकारी आन्दोलन का भविष्य प्रशिक्षित ईमानदार तथा उद्यमी सदस्यों पर ही निर्भर करेगा। इन सभी समितियों की सिफारिशों पर ब्रिटिश भारत में सहकारिता के लिए प्रशिक्षण की व्यवस्था की व्यवस्था की गई थी। स्वतन्त्रता के पश्चात् भी कई समितियों का गठन हुआ तथा कई प्रकार के प्रशिक्षण केन्द्र भी खोले गए।

प्रशिक्षण की आवश्यकताओं तथा सुविधाओं की इस पृष्ठभूमि में भी आजकल गांवों की सहकारी समितियों की स्थिति भिन्न प्रतीत होती है। इस क्षेत्र में हुए अनेक अध्ययन यह बताते हैं कि सहकारी समितियों के सदस्य सहकारिता के सिद्धान्तों से एकदम अपरिचित होते हैं। गांवों में सहकारी समितियां प्रारम्भ कर दी जाती हैं क्योंकि उन्हें प्रारम्भ करना होता है। सामुदायिक विकास कार्यक्रम के अन्तर्गत गांवों में तीन मूलभूत संस्थाओं का होना आवश्यक है। अतः यह आर्थिक संस्था भी एक रस्म पूरी करने के लिए प्रारम्भ कर दी जाती है। सहकारिता आर्थिक स्थिति सुधारने के प्रयास के साथ-साथ सामाजिक सुधार का भी अंग है, इसलिए महत्वपूर्ण बात समितियों की स्थापना करना नहीं अपितु सहकारिता सिखाना है। जैसा कि पहले कहा जा चुका है, सहकारिता के लिए प्रशिक्षण की सुविधाएं है. पर गांवों में समिति के सदस्यों का प्रशिक्षण तब प्रारम्भ होता है जब कि वे पहले ही गलत प्रशिक्षण पा चुके होते हैं। समितियों के सदस्यों को गलत तरीकों द्वारा सदस्य बनाया जाता है, उन्हें सहकारिता के उद्देश्य बताने के बजाए अनेक झूठे प्रलोभन दिए जाते हैं। फलस्वरूप जब ग्रामवासी सहकारी समिति के सदस्य बन जाते हैं तभी से उनकी परेशानियां शुरू हो जाती है। प्रथम तो समिति के पंजीकरण के समय ही अनेक दिक्कतें आती हैं और बड़ी मुश्किल से जब कभी ऋण का वितरण होता है तो ऐसा प्रतीत होता है जैसे कहीं से लूटा हुआ माल आपस में बांटा जा रहा हो। इस प्रकार सदस्यों में सहकारी समिति के प्रति आस्था के बजाए अनास्था ही बढ़ती है। गांवों में कुछ विरले सदस्य ऐसे भी होते हैं जो यह मानकर चलते हैं कि ऋण वापस अदा करने के लिए लिया जाता है। ऋण का उपयोग भी सदस्य अधिकतर उन कामों के लिए कम करते हैं जिनके लिए उसे लिया जाता है। विभिन्न अध्ययन यह भी बताते हैं कि सहकारी समितियां अब गांवों में शोषण करने वाले, दूकानदार, जमींदार और ब्याज पर पैसा उधार देने वालों के हाथों में चली गई हैं तथा वे समितियों से लिए गए ऋण के भुगतान के लिए स्वयं ऊंची ब्याज की दर पर पैसा उधार

देते हैं।

सदस्यों की इस स्थिति के साथ ही साथ कार्यकर्त्ताओं की भी यही स्थिति है। पुस्तकों में गलत हिसाब लिखना तथा द्रव्य का गलत उपयोग तो एक आवश्यक परम्परा के रूप में लिया जाता है। इस प्रकार इन सभी रस्सों को पूरा करने के बाद सहकारी समितियां बन्द कर दी जाती हैं। यही कारण है जिससे कई सहकारी समितियां बन्द हो जाती हैं या निष्क्रिय हो जाती हैं।

राजस्थान के तीन जिलों में सहकारी समितियों के कृषि सम्बन्धी कार्यों के एक शोध अध्ययन (डा० आर० एन० तिवारी, एग्रीकल्चरल प्लानिंग एण्ड रोल आफ कोआपरेटिव्ज, एस० चान्द एण्ड संस, दिल्ली) में बताया गया है कि अधिक उपज देने वाले बीज खरीदने में सहकारी समितियों ने दो महीने तक ऋण देने में लगाए तथा किन कारणों से ऋण देने से देरी हुई यह भी सदस्यों को नहीं बताया गया। इस प्रकार सहकारिता के सिद्धान्त "आपस में समस्याओं का भागीदार होने तथा इसके कार्यकलापों का सभी सदस्यों को ज्ञान होने" की अवहेलना की जाती है। इस प्रकार की असाधारण तथा अकारण देरी तथा अध्यक्ष या सचिव की उदासीनता, सदस्यों की ऋण लेने की रुचि को ही कम कर देता है। इकोनोमिक एण्ड पोलीटिकल वीकली, सितम्बर 19, 1973 में छपे एक लेख में महाराष्ट्र राज्य में सहकारी समितियों की दशा बहुत ही दयनीय बताई गई है। लेख में कहा गया है कि राज्य में सहकारी आन्दोलन असफल रहा है। इसमें बताए गए तथ्यों के अनुसार 73 सहकारी तेल मिलों में से केवल 19 मिलें ही अभी कार्य कर रही हैं तथा शेष 54 बन्द हैं। इनके पीछे मुख्य कारण यह बताया गया है कि तेल मिलों ने समितियों को अपनी उपज न बेचकर बाजार में ऊंची कीमत पर बेची है। इसी प्रकार पिछले 10 वर्षों में 128 मुर्गीपालन सहकारी समितियां बनी थीं पर इनमें से 98 बन्द हो चुकी हैं (जिनमें 43 तो बिल्कुल ही समाप्त कर दी गई हैं)।

ये सभी तथ्य यही इंगित करते हैं कि देश में सहकारी आन्दोलन सफल नहीं हो पाया है किन्तु फिर भी हमें इस दिशा में प्रयास कम नहीं करने चाहिए। अपितु हमें यात्रा के पूर्व की सभी तैयारियां कर लेनी चाहिए ताकि यह आन्दोलन ग्रामीण अभावों या असुरक्षाओं की गहराइयों में लुप्त न हो पाए। मेरा भी यह मत है कि समितियों के सदस्यों का प्रशिक्षण या शिक्षा, समिति के गठन के पूर्व ही हो जानी चाहिए। जैसा कि नेपोलियन ने कहा है कि बच्चे की शिक्षा बच्चे के जन्म से बीस वर्ष पूर्व ही शुरू हो जानी चाहिए। प्रशिक्षण कार्यक्रम भी हिसाब-किताब रखने की योग्यता या कम खर्च करके खरीद इत्यादि तक ही सीमित नहीं होना चाहिए वरन् आपसी सहयोग, ईमानदारी, सहअस्तित्व आदि की शिक्षा भी होनी चाहिए। सहकारी संस्था स्थापित करने या उसमें सम्मिलित होने का निश्चय करने में तथा इसको चालू रखने में यथेष्ट सहयोग दे सकने के लिए एक निश्चित बौद्धिक व नैतिक स्तर तथा ज्ञान की आवश्यकता होती है। अतएव सहकारी संस्थाओं में कार्य करने वाले कार्यकर्त्ताओं को विचार और कार्य करने के सहकारी ढंगों को जानना आवश्यक है।

सहयोगियों की राय

जो लोग मूल्य बढ़ाने के लिए श्रीमती इन्दिरा गांधी और उनकी सरकार को कोसते नहीं अघाते, क्या उन्होंने कभी यह सोचा है कि यह मूल्य वृद्धि भी क्या श्रीमती इन्दिरा गांधी ने की है? फिर मजे की बात यह है कि जो लोग खुद अपने माल की अनुचित जामाखोरी और मुनाफाखोरी करते हैं, वह भी अपनी जरूत की दूसरी वस्तुएं न मिलने पर सरकार को कोसते हैं और और जामखोरी तथा मुनाफाखोरी के खिलाफ रोना रोते हैं। यह ठीक है कि सरकार को जमाखोरी, मुनाफाखोरी और गैरवाजिब मूल्य वृद्धि के खिलाफ कड़ी कार्रवाई करनी चाहिए परन्तु आम जनता का, खासकर उपभोक्ता का भी कुछ फर्ज है। यदि उपभोक्ता का संगठन मजबूत किया जाए और उसके जरिए सक्रिय प्रतिरोध आन्दोलन चलाया जाए तो अनैतिक और असामाजिक व्यापारियों को अधिक प्रभावी तौर पर काबू में लाया जा सकता है।

हिन्दुस्तान

विदेशों में ऐसी व्यवस्था है कि उर्वरक बीज आदि की सुविधा उन्हीं किसानों को दी जाती है जो निश्चत मात्रा में अनाज सरकार को देते है। यदि इसी तरह की व्यवस्था यहां होती तो कोई कारण नहीं कि वसूली के लक्ष्य पिछड़ जाते, लेकिन इसके लिए सरकार का दृढ़ निश्चय भी होना जरूरी है और यही यहां कमी है। हर बात में "बिल्ली के गले में घंटी कौन बांधे" वाली बात होती है। निहित स्वार्थ और प्रतिक्रियावादी ताकतों से तो लोहा लेना ही पड़ता है।

सरकार के लिए अनाज वसूली और अनाज के व्यापार में मिली असफलता एक सबक है जिसे उसे आगे के कार्यक्रमों पर अमल करते समय ध्यान में रखना चाहिए। किसी भी काम के बारे में एक बार नीति तय हो जाने पर पूरी मुस्तैदी से उस पर अमल होना चाहिए तभी सफलता मिल सकेगी और देश के करोड़ों लोगों का भला हो सकेगा। **सेवाग्राम**

"भविष्य के गांव"

बलदेव सिंह आर्य

अपने गांवों में जिस तेजी के साथ खेतों में उत्पादन बढ़ा है कुछ उसी तेजी के साथ गांवों के अन्य विकास कार्य नहीं हो सके हैं। कृषि में हरित क्रान्ति के कारण गांवों के लोगों की आर्थिक स्थिति जरूर सुधरी है और अब बहुत से लोग इस बात की आकांक्षा करने लगे हैं कि उनके रहन सहन का स्तर भी ऊंचा उठे तथा उनको वे सुविधाएं भी मिलें जो सामान्यतः मानव जीवन के लिए आवश्यक मानी जाती हैं। इस नई चेतना के फलस्वरूप जो बहुमुखी विकास की मांग गांवों में उठने लगी है उसको किसी हद तक पूरा करने के उद्देश्य से यह निर्णय किया गया है कि पहले कुछ ऐसे गांव चुने जाएं जिनमें हर तरह से विकास कार्य पूरे किए जाएं। इन गांवों को "भविष्य के गांव" कहा जाएगा क्योंकि आशा यह की जाती है कि जो विकास कार्य इन गांवों में किए जाएंगे उनकी देखा-देखी आस-पास के गांवों में भी स्वतः विकास कार्यों को प्रोत्साहन मिलेगा। दूसरी बात यह है कि "भविष्य के गांवों" में जो लाभ के कार्य पूरे किए जाएंगे उनका लाभ पास के गांवों को मिलेगा। उदाहरण के लिए यदि स्कूल, चिकित्सा आदि की सुविधा किसी "भविष्य के गांव" में उपलब्ध की जाती है तो उससे लगे हुए अन्य गांवों को भी इन सुविधाओं का आसानी से लाभ पहुंच सकेगा। तीसरी बात यह भी है कि विकास के इतने कार्य करने को हैं कि उन सबको सभी जगह एक साथ पूरा करने के यदि प्रयत्न भी किए जाएं तो उसमें सफलता आसानी से नहीं मिल पाएगी। यदि किसी एक जगह उपलब्ध साधनों को एकत्र करके कर्मचारियों को कुछ निश्चित लक्ष्यों को पूरा करने के लिए नियुक्त कर दिया जाता है तो सफलता आसान हो जाती है। इसलिए "भविष्य के गांवों" में साधनों तथा कर्मचारियों को किसी हद तक केन्द्रित करने का विचार किया गया है। प्रदेश के सभी विकास विभागों के अध्यक्षों के परामर्श से इस योजना को तैयार किया गया है ताकि वे सभी लोग अपने अपने विभागों के साधनों तथा कर्मचारियों के द्वारा इन चुने हुए गांवों में कुछ ऐसे निर्धारित लक्ष्य पूरा करने की चेष्टा करें जिससे कि सारे कार्यक्रम समन्वित रूप से गांव के विकास की एक नई शक्ल पैदा कर दें। इसमें खेती, सिंचाई, बागवानी, युवक विकास, सहकारिता, समाज शिक्षा, अल्प बचत आदि सभी कार्यक्रमों से सम्बन्धित विभागों से सहयोग प्राप्त किया जाना है। मुझे इस बात की बड़ी खुशी है कि ये सभी विभाग इस बड़े कार्यक्रम में खुशी-खुशी अपना सहयोग दे रहे हैं।

गांवों का चुनाव बड़ी सावधानी से किया जाएगा क्योंकि सारी सफलता इस बात पर निर्भर होगी कि जो गांव चुने जा रहे हैं वहां के लोग कितनी दूर तक इस कार्यक्रम को स्वीकार करने के लिए तैयार हैं और वे ग्राम सेवक तथा पंचायत सेवक भी, जो उन गांवों में काम कर रहे हैं, कितनी हद तक उत्साह दिखा पाते हैं तथा विकास के साधन जुटा पाते हैं। यदि सही चुनाव हुआ तो मुझे पूरा विश्वास है कि इस कार्यक्रम से अद्भुत परिणाम निकलेंगे और सारे ग्रामीण क्षेत्र में विकास की क्रान्ति का एक रास्ता खुल जाएगा।

यह स्मरण रखने की बात है कि जो भी कार्यक्रम निर्धारित किए जा रहे हैं उन्हें तीन सालों में पूरा कर लिया जाना है। मतलब यह है कि यदि सिंचाई का लक्ष्य यह रखा गया कि 85 प्रतिशत क्षेत्रफल सिंचित हो जाएगा तो इसी अवधि में इस लक्ष्य को अवश्य पूरा कर लेना चाहिए। "भविष्य के गांव" के लिए कुछ तो ऐसे कार्यक्रम निर्धारित किए गए हैं जिन्हें स्थानीय सुविधाओं को देखते हुए हर चुने हुए गांव में लागू करना ही चाहिए। उदाहरण के लिए मिट्टी की जांच वर्ष में दो बार करा लेना, दलहनी फसलों के अन्तर्गत कम से कम एक तिहाई हिस्सा लाना, हरी खाद की फसलों का फैलाव करना, अधिक से अधिक कम्पोस्ट खाद बनाना, खाली धरती पर ईंधन के वृक्षों को लगाना, गांवों में हर परिवार के लिए गृह-वाटिका का कार्यक्रम बनाना, पपीते, नींबू, केले आदि शीघ्र उगने वाले फल वाले वृक्षों को उगाना आदि खेती के कार्य हैं।

"भविष्य के गांवों" में एक विशेष कार्यक्रम यह लिया जाएगा कि खाली भूमि पर छायादार और शोभा के वृक्ष लगाए जाएंगे। परिवारों को इस बात के लिए भी प्रोत्साहित किया जाएगा कि वे घरों के आगे-पीछे कुछ फूलों के भी पौधे लगाएं। युवक विकास के लिए खेलकूद के मैदान तथा व्यायामशालाएं स्थापित की जाएंगी। यह भी लक्ष्य रखा गया है कि "भविष्य के गांव" में कम से कम 15 परिवारों के पास पी० आर०ए०आई० टाइप शौचालय, धुंआ रहित चूल्हा, सोख्ता, एवं बर्तन साफ करने के लिए उचित स्थान होंगे। गांवों में पीने के पानी की पूरी व्यवस्था होगी। पशुओं के लिए पक्के चरागाह का बन्दोबस्त होगा। इन गांवों में प्रौढ़ शिक्षा के लिए कक्षाएं चलाई जाएंगी। पुस्तकालयों, वाचनालयों की स्थापना की जाएगी। कुछ ऐसे कार्यक्रम भी रखे गए हैं जो उन्हीं "भविष्य के गांवों" में लागू होंगे जहां विशेष सुविधाओं का मिलना सम्भव होगा। मछली पालन, भेड़ पालन, लघु उद्योगों की स्थापना करना आदि ऐच्छिक योजनाएं होंगी।

इस योजना का शुभारम्भ राष्ट्र नायक श्री नेहरू के जन्म दिवस पर किया गया है। नेहरू जी को गांवों से बहुत प्रेम था। उनके स्वप्न को पूरा करने की दिशा में आज हमने एक और कदम उठाया है।

विजेताओं

(निजी

कृषि पण्डित श्री धोंदीराम भाऊसाहेब
प्रथम पुरस्कार (धान)

महाराष्ट्र में तलासी गांव के श्री धोंदीराम भाऊसाहेब यादव को 1972-73 की अखिल भारतीय फसल प्रतियोगिता में कृषि पण्डित की उपाधि मिली। उन्होंने यह उपाधि प्रति हैक्टेयर 16,912 किलोग्राम धान पैदा करके प्राप्त की। 1972-73 में धान का यह रिकार्ड उत्पादन था। गेहूं की फसल प्रतियोगिता में कृषि पण्डित की उपाधि राजस्थान में श्रीगंगानगर जिले के श्री बलवन्त सिंह को मिली। श्री बलवन्त सिंह ने प्रति हैक्टेयर 12,858 किलोग्राम गेहूं का उत्पादन लिया। 12 मार्च को नई दिल्ली में हुए एक समारोह में केन्द्रीय कृषि मन्त्री श्री फखरुद्दीन अली अहमद ने इन दोनों को तीन-तीन हजार रुपए के प्रथम पुरस्कार और कृषि पण्डित के प्रमाण-पत्र प्रदान किए।

बाद में एक भेंट में श्री यादव ने बताया कि धान की खेती को अच्छी तरह देखभाल और वैज्ञानिक तरीकों के प्रयोग से अधिक लाभदायक बनाया जा सकता है। उन्होंने जया किस्म के बीजों का इस्तेमाल किया और ट्राम्बे का 'सफल' उर्वरक लगाया और खेतों में सिंचाई की ओर अधिक ध्यान दिया। पहले वर्ष कृषि पण्डित की उपाधि श्री भाऊसाहेब के छोटे भाई श्री पाण्डुरंग भाऊ साहेब को मिली थी। यह इन दोनों भाइयों की शानदार सफलता है और अब दोनों ही कृषि पण्डित हैं। तलासी गांव अब पुरस्कार विजेता किसानों का ग्राम कहलाता है। इस गांव के खेतों में धान का औसत उत्पादन बढ़कर प्रति हैक्टेयर 40 क्विण्टल से ऊपर है।

श्री पी० जी० चन्द्र शेखर राजू
द्वितीय पुरस्कार (धान)

गेहूं में कृषि पण्डित का पुरस्कार पाने वाले श्री बलवन्त सिंह एक किसान घराने के हैं जो विभाजन से पूर्व पंजाब में रहते थे। यह प्रगतिशील किसान हमेशा ही उपज बढ़ाने के तरीकों की ढूंढ खोज करता रहा है। इस प्रतियोगिता में उन्होंने 'कल्याण सोना' बीजों का इस्तेमाल किया और एक एकड़ के खेत में गेहूं उगाया। चूंकि वर्षा कम हुई, अतः 8 बार खेत की सिंचाई की। उन्होंने इस पर 850 रुपए खर्च किए और इससे 4,375 रुपए प्राप्त किए।

धान के उत्पादन का दूसरा पुरस्कार श्री पी० जी० चन्द्रशेखर राजू को दिया गया। यह आन्ध्र प्रदेश में कुरुनूल जिले के रहने वाले हैं। इन्हें पुरस्कार सहित 1,200 रुपए और विशेष योग्यता का प्रमाण पत्र दिया गया है। उन्होंने प्रति हेक्टेयर 15,153 किलोग्राम धान का उत्पादन किया। श्री राजू ने, जिन्हें 1970-71 में धान के उत्पादन के लिए राज्य स्तरीय प्रथम पुरस्कार मिल चुका है, बताया कि वे अब कीटनाशक उत्पादन के लिए एक संयन्त्र लगाने की कोशिश कर रहे हैं। इससे इस क्षेत्र के किसानों की कीटनाशकों की आवश्यकताएं बहुत हद तक पूरी हो सकेंगी।

गेहूं उत्पादन का दूसरा पुरस्कार श्री रेवनाथ नाथूजी चौरे को मिला। ये मध्यप्रदेश के रहने वाले हैं और कृषि में स्नातक हैं। इन्होंने बाबूगीरी का काम पसन्द नहीं किया और खेती के काम में लग गए। 1970-71 में

श्री डी० आर० प्रफुल्ल चन्द
तृतीय पुरस्कार (धान)

पुरस्कार

द्वारा)

राज्य स्तरीय प्रतियोगिता में उन्हें पहला स्थान प्राप्त हुआ। 1972-73 के अखिल भारतीय गेहूं फसल प्रतियोगिता में उन्होंने प्रति हैक्टेयर 11,375 किलोग्राम का उत्पादन किया। उन्होंने इस पर 980 रुपए खर्च किए और इससे 4,685 रुपए की आमदनी प्राप्त की। श्री चौरे छिन्दवाडा जिले रिन्धौर गांव में कृषि की नई तकनीकें अपनाने में सबसे अग्रणी रहे हैं।

धान फसल प्रतियोगिता में तीसरा पुरस्कार श्री डी० आर० प्रफुल्लचन्द को मिला। उन्हें 800 रुपए और प्रमाणपत्र प्रदान किया गया। वे कर्नाटक राज्य में सिमोगा जिले के रहने वाले हैं और उन्होंने प्रति हैक्टेयर 14,712 किलोग्राम धान पैदा किया। गेहूं प्रतियोगिता में तीसरा पुरस्कार श्री गुरुचरण सिंह भाटिया को मिला। इन्होंने प्रति हैक्टेयर 9,318 किलो ग्राम गेहूं का उत्पादन किया।

श्री गुरचरण सिंह भाटिया
तृतीय पुरस्कार (गेहूं)

धान प्रतियोगिता में 8½ राज्यों के 28 किसानों ने भाग लिया जबकि गेहूं प्रतियोगिता में 5 राज्यों के 17 किसानों ने भाग लिया। प्रतियोगिता वाले खेतों में निरीक्षण का काम राज्य सरकार और भारत सरकार के अफसरों के मातहत होता है।

श्री फखरुद्दीन अली अहमद ने पुरस्कार विजेताओं को सलाह दी कि वे अपने ज्ञान और अनुभव से गांव के और किसानों को भी लाभ पहुंचाएं जिससे देश में उत्पादन बढ़ता रहे। श्री अहमद ने गेहूं पैदा करने वाले राज्यों का विशेष जिक्र किया और कहा कि पंजाब में गेहूं 25 लाख हैक्टेयर जमीन में उगाया जाता है जबकि उत्तर प्रदेश में गेहूं की खेती 60 लाख हैक्टेयर में होती है, पर प्रति हैक्टेयर उत्पादन पंजाब में उत्तर प्रदेश से और अन्य राज्यों से दुगुना है। उन्होंने कहा कि यदि दूसरे राज्य पंजाब के उदाहरण का अनुसरण करें तो देश में गेहूं का उत्पादन काफी बढ़ सकता है। इसी प्रकार पंजाब और हरियाणा में धान की खेती केवल कुछ ही वर्षों से शुरू हुई है। परन्तु वहां धान की पैदावार धान पैदा करने वाले राज्यों के मुकाबले ज्यादा है। उर्वरकों के मिलने में कठिनाई की चर्चा करते हुए उन्होंने कहा कि सरकार की अपनी मजबूरियां हैं क्योंकि देश में इसका उत्पादन कम है और विश्व की मण्डियों में यह उपलब्ध नहीं है।

मन्त्री महोदय ने कहा कि इस समस्या का हम दो तरह से मुकाबला कर रहे हैं—पहले तो उपलब्ध रासायनिक उर्वरकों के इस्तेमाल से उत्पादन

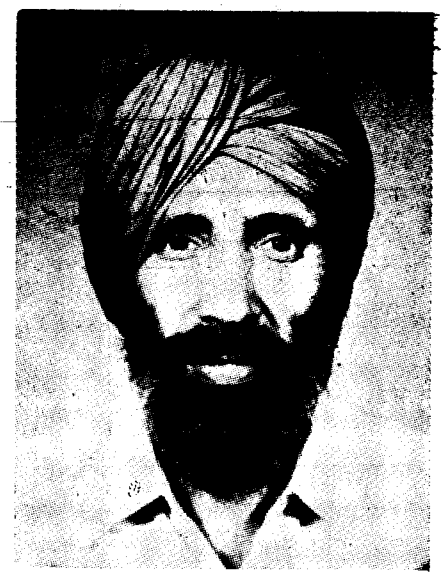

कृषि पण्डित श्री बलवन्त सिंह
प्रथम पुरस्कार (गेहूं)

अधिकतम करना और दूसरे उपलब्ध गैर-रासायनिक खादों के इस्तेमाल को बढ़ाना। उन्होंने कहा कि उर्वरक साधनों के सही उपयोग करने, स्थानीय रूप से तैयार खादों पर जोर देने और सिंचाई की कुशल व्यवस्था से ही हम वर्तमान कठिन परिस्थितियों से निकल सकते हैं।

□

श्री रेवनाथ चौरे
द्वितीय पुरस्कार (गेहूं)

पांचवीं योजना में ग्राम विकास

पांचवीं योजना के प्रमुख उद्देश्यों में से एक देहातों के रहने वाले सबसे गरीब 30 प्रतिशत लोगों की मासिक खर्च करने की प्रति व्यक्ति सामर्थ्य बढ़ाना है। इसका अभिप्राय है कि इन लगभग ढाई करोड़ परिवारों की आमदनी काफी बढ़नी ही चाहिए। यह कार्य निम्नलिखित तीन दिशाओं में यत्न कर पूरा किया जाएगा :—

1. छोटे और सीमान्त किसानों का उद्धार तथा बड़े पैमाने पर दुधारू पशु पालने का कार्यक्रम। पशुपालन और मत्स्य पालन के कार्यक्रमों में इस प्रकार के परिवर्तन किए जाएंगे ताकि इनसे कुल उत्पादन बढ़ने के साथ-साथ छोटे और सीमान्त किसानों तथा कृषि मजदूरों की आर्थिक अवस्था भी सुधरे।

2. पांचवीं योजना में चुनी हुई सिंचाई परियोजनाओं के कमाण्ड क्षेत्र विकसित किए जाएंगे तथा देश के जिन इलाकों में सूखा पड़ता है उनकी हालत सुधारने पर अधिक ध्यान दिया जाएगा।

3. कृषि अर्थव्यवस्था के अपेक्षाकृत कमजोर वर्गों की हालत सुधारने के लिए विशेषरूप से तैयार किए गए कार्यक्रमों को बढ़ाना तथा उन पर पूरी तरह ध्यान देकर अमल करना।

प्रगति

चौथी योजना के उद्देश्यों में से एक यह भी था कि छोटे और सीमान्त किसान तथा कृषि मजदूर विकास के कार्यों में भाग लें और उन्हें इन विकास कार्यों का लाभ मिले। इस उद्देश्य को पूरा करने के लिए योजना में और बातों के अलावा, ये दो परियोजनाएं शुरू की गईं : छोटे परन्तु विकासक्षम किसानों के लिए परियोजना तथा सीमान्त किसानों और खेतिहर मजदूरों के लिए परियोजना।

यद्यपि यह कार्यक्रम 1969 में शुरू किया गया था किन्तु राज्यों और जिला अधिकारियों को इस कार्यक्रम की आधारभूत विचारधारा बतलाने में और परियोजनाएं तैयार कराने में वर्ष का अधिकांश समय व्यतीत हो गया। इस प्रकार 1971-72 ही ऐसा वर्ष था जिसमें अधिकांश परियोजनाओं पर सारे वर्ष अमल किया गया, हालांकि कुछ इससे पहले भी शुरू की जा चुकी थीं। इस समय छोटे किसानों के लिए 46 परियोजनाओं पर तथा सीमान्त किसानों और खेतिहर मजदूरों की 41 परियोजनाओं पर अमल किया जा रहा है। चौथी योजना में इन दोनों प्रकार की परियोजनाओं पर 115 करोड़ रु० खर्च करने का निश्चय किया गया था किन्तु बाद में यह राशि 103 करोड़ रु० कर दी गई तथा शेष 12 करोड़ रु० उन छह विशेष परियोजनाओं में खर्च करने की व्यवस्था की गई जो आदिवासी इलाकों में शुरू की गई हैं। इनमें से अधिकांश परियोजनाओं पर तीन वर्ष तक अमल हो सकेगा।

चौथी योजना बनाते समय अनुमान लगाया गया था कि योजना के पहले वर्ष में 25 करोड़ रु० के अल्पावधि ऋण दिए जाएंगे और योजना के अन्तिम वर्ष में एक अरब रु० के। इस प्रकार अनुमान लगाया गया था कि इन परियोजनाओं की सम्पूर्ण अवधि में मध्यावधि और दीर्घावधि के लिए पूंजी निवेश ऋणों में लगभग दो अरब रु० दिए जाएंगे। इन ऋणों का कुछ रुपया सहकारी बैंकों तथा कुछ व्यावसायिक बैंकों द्वारा दिया जाना था।

पांचवीं योजना

यद्यपि परियोजनाओं वाले इलाकों में छोटे और सीमान्त किसानों को अधिक रुपया उधार मिला है किन्तु यह राशि आशा से काफी कम रही है। सहकारी वर्ष 1972-73 से मार्च 73 तक की अवधि में छोटे किसानों के इलाकों में 17 करोड़ 26 लाख रु० दिए गए। सहकारी संस्थाओं ने मध्यावधि और दीर्घावधि के लिए पूंजी निवेश ऋणों में 28 करोड़ 62 लाख रु० दिए। व्यावसायिक बैंकों ने ऐसे किसानों को लगभग 2 करोड़ 31 लाख रु० ऋण में दिए। छोटी सिंचाई और अन्य कार्यक्रमों में कर्नाटक, उड़ीसा, उत्तर प्रदेश, गुजरात, पंजाब और हरियाणा में सन्तोषजनक प्रगति हुई। असम, जम्मू-कश्मीर, बिहार, राजस्थान और पश्चिम बंगाल में अच्छी प्रगति नहीं हुई। पांचवी योजना में यह कार्यक्रम जारी रखा जाएगा और इसके अधीन 160 परियोजनाओं पर काम किया जाएगा। नई परियोजनाएं ऐसे इलाकों में शुरू की जाएंगी जहां छोटे और सीमान्त किसान तथा खेतिहर मजदूर काफी संख्या में रहते हैं। इन परियोजनाओं का लाभ उन्हीं किसानों और खेतिहर मजदूरों को मिलेगा जिनके पास दो हैक्टेयर तक जमीन है।

पांचवी योजना के दौरान छोटे किसान और सीमान्त किसानों तथा खेतिहर मजदूरों के लिए शुरू की जाने वाली संयुक्त परियोजनाओं में फसल सुधारने पर ध्यान दिया जाएगा। केन्द्रीय योजना में छोटे और सीमान्त किसानों की 160 परियोजनाओं के विशेष कार्यक्रमों के लिए दो अरब रु० की व्यवस्था की गई है। राज्यों की योजनाओं में निश्चित की गई राशि से इन कार्यक्रमों के लिए और रुपया भी मिलेगा।

सूखाग्रस्त

सूखा वाले इलाकों के कार्यक्रमों पर लगभग चार वर्षों से अमल किया जा रहा है। इनके अधीन लगभग 1 अरब 11 करोड़ रु० की योजनाएं स्वीकृत की जा चुकी हैं। इनमें लघु सिंचाई, यातायात, उर्वर भूमि संरक्षण, वनरोपण और पीने के पानी से सम्बद्ध कार्य हैं। जुलाई, 1973 तक इन सब कार्यों पर लगभग 74 करोड़ रु० खर्च किए जा चुके थे।

देश का लगभग 19 प्रतिशत क्षेत्र सूखा वाला है, जिसमें लगभग 12 प्रतिशत देशवासी रहते हैं। प्रादेशिक असमानताओं को बढ़ाने में इस क्षेत्र का विशेष योग रहता है अतः पांचवीं योजना में ऐसे इलाकों के लिए सुविचारित विकास नीति तैयार करनी होगी। सूखा वाले इलाकों की कुल पैदावार काफी कम रहती है। हर तीन साल बाद सूखे वाले इलाकों के लगभग बीस लाख लोगों को अपने पशुओं सहित घर-बार छोड़ना पड़ता है। इसलिए पांचवीं योजना में ऐसे प्रयत्न विशेष रूप से करने होंगे, जिनसे सूखे वाले इलाकों की परिस्थितियों में सुधार हो सके। इसके लिए निम्नलिखित उपाय अपनाने होंगे :—

1. सिंचाई के साधनों का विकास और प्रबन्ध।

2. उर्वर भूमि और नमी को सुरक्षित रखना तथा फिर जंगल लगाना।

3. चरागाहों का विकास तथा फसलों के क्रम में परिवर्तन।

4. खेती के तरीकों में परिवर्तन।

5. पशुपालन।

6. छोटे और सीमान्त किसानों तथा खेतिहर मजदूरों की हालत सुधारना।

सिंचाई आयोग के अनुसार इन दिनों सूखा वाले इलाकों के लगभग 13 प्रतिशत खेतों में सिंचाई का प्रबन्ध है। इन दिनों जिन सिंचाई योजनाओं पर अमल किया जा रहा है, उनके पूरा हो जाने पर लगभग 19 प्रतिशत खेतों की सिंचाई का प्रबन्ध हो जाएगा। इसके बावजूद 81 प्रतिशत इलाके में सिंचाई की व्यवस्था नहीं हो पाएगी। इस पृष्ठभूमि में सूखे वाले इलाकों में सिंचाई के साधनों का विकास और प्रबन्ध बहुत महत्वपूर्ण हो जाता है। पांचवीं योजना के दौरान सिंचाई के वर्तमान साधनों में सुधार करने के अतिरिक्त सूखा वाले इलाकों में निर्माणाधीन विभिन्न सिंचाई योजनाएं पूरी करनी होंगी।

सूखा वाले इलाकों में सीमित मात्रा में उपलब्ध पानी का अधिकतम उपयोग करना होगा, अतः इन इलाकों में अधिक पानी चाहने वाली गन्ने और धान जैसी फसलें न बोकर चारे की फसलों तथा चरागाहों पर विशेष ध्यान दिया जाना चाहिए।

छोटे किसान

सूखा वाले इलाकों में छोटे और सीमान्त किसानों की संख्या लगभग 35 लाख है। पांचवी योजना के दौरान इन इलाकों में ऐसे विकास कार्यक्रम शुरू करने का विचार है, जिनसे छोटे किसानों, सीमान्त किसानों और खेतिहर मजदूरों को विशेष रूप से लाभ होगा।

सूखे वाले इलाकों के समन्वित कृषि विकास कार्यों की मुख्य बातों पर सरकार का कोई एक वर्तमान विभाग ध्यान नहीं दे सकता, किन्तु कम से कम इन पांच विभागों को ध्यान देना होगा—कृषि, सिंचाई, पशुपालन, वन विकास और सहकारिता। ऐसी आशंका है कि सूखे वाले इलाकों के विकास की कोई भी समन्वित योजना विभिन्न विभागों में आपसी खींचतान के कारण असफल हो सकती है। अतः इस समस्या को सुलझाने के लिए यह आवश्यक है कि संगठन सम्बन्धी परिवर्तन किए जाएं। इसके अधीन समन्वय स्थापित करने वाली ऐसी कोई संस्था या निगम बनाया जा सकता है जिसे सूखा वाले जिले में विकास कार्यक्रम तैयार करने, इसमें समन्वय स्थापित करने और इन पर अमल करने की जिम्मेदारी सौंपी जाए।

प्रायोगिक परियोजनाएं

1971-72 के दौरान देशभर में देहाती इलाकों के लोगों को बड़े पैमाने पर रोजगार देने की योजना शुरू की गई थी। यह कार्यक्रम योजना का भाग नहीं था और इस पर 50 करोड़ रु० खर्च करने की व्यवस्था की गई थी, ताकि प्रत्येक जिले में कम से कम कुछ निश्चित लोगों को एकदम रोजगार पर लगाया जा सके। इस योजना के ये दो उद्देश्य थे : (1) प्रत्येक में प्रतिवर्ष औसतन 1,000 लोगों के लिए रोजगार के अवसर पैदा करना, (2) स्थानीय विकास योजनाओं के अनुरूप स्थायी महत्व की परिसम्पत्तियां बनाना।

ग्राम विकास की उपरोक्त योजना शुरू करने के समय छोटे किसानों, सीमान्त किसानों और खेतिहर मजदूरों आदि की हालत सुधारने के कार्यक्रम पूरी तरह शुरू नहीं हो पाए थे। इसलिए बेरोजगारी और कम रोजगारी से उत्पन्न कठिनाइयां दूर करने के लिए कुछ न कुछ प्रयत्न आवश्यक समझा गया था। अब ये कार्यक्रम कुछ समय से काफी क्षेत्र में फैल गए हैं और इन्हें बढ़ाया भी जाएगा।

इसके अलावा योजना, के अधीन देहाती इलाकों में सड़कें बनाने का भी कार्यक्रम शामिल किया गया है जिस पर 5 अरब रु० खर्च किए जाएंगे। इसी प्रकार देहाती इलाकों में पीने के पानी की व्यवस्था करने पर भी 5 अरब रु० खर्च किए जाएंगे। स्कूल, प्राथमिक स्वास्थ्य केन्द्र तथा मकान आदि बनाने पर भी काफी रुपया खर्च करने की व्यवस्था की गई है।

इसके अतिरिक्त क्षेत्र विकास के समन्वित दृष्टिकोण को ध्यान में रखते हुए विशेष रूप से शुरू की गई यह योजना जारी रखना सम्भवतः आवश्यक नहीं रहा, क्योंकि समन्वित क्षेत्र विकास के दृष्टिकोण में ग्राम विकास और रोजगार आधारभूत उद्देश्य होंगे। किन्तु सघन ग्रामीण रोजगार की प्रायोगिक परियोजना 1974-75 तक निश्चित कार्यक्रम के अनुसार जारी रहेगी।

इस योजना के जो परिणाम सामने आएंगे, उनको ध्यान में रखते हुए विभिन्न क्षेत्रों के समन्वित विकास का ऐसा कार्यक्रम तैयार करने में सहायता मिलेगी, जिसमें उस इलाके के अधिक से अधिक लोगों को रोजगार दिया जा सके।

□

कृषि में पूर्ण और अल्प बेरोजगारी की समस्या

[कृषि क्षेत्र में पूर्ण बेरोजगारी ही नहीं बल्कि अल्प बेरोजगारी खास तकलीफ की समस्या है, जिसमें लोगों के पास पूरा काम नहीं होता। वस्तुतः यह एक गम्भीर और कठिन समस्या बनी हुई है। ऐसी स्थिति में जानबूझकर खेती से श्रमिकों को दूसरे कामों में खींचने की नीति का क्रियान्वयन खेती की प्रगति में बाधक सिद्ध होगा और परिणामस्वरूप कृषि उत्पादन को हानि पहुंचेगी। अतः खेती पर अवलम्बित लोगों की आमदनी बढ़ाने के ऐसे उपाय अपनाए जाने चाहिए जिनमें स्थानीय संसाधन और कौशल का उपयोग हो और अधिक रोजगार पैदा करने में वहां की औद्योगिक सम्भावनाओं को पूरा-पूरा काम में लाया जाए।]

इस अध्ययन में उत्तरी महाकौशल क्षेत्र को लिया गया है जो मध्यप्रदेश का केन्द्रस्थ भाग है। इसमें जबलपुर, सागर, दमोह और नरसिंहपुर जिले आते हैं जो जबलपुर राजस्व सम्भाग के अन्तर्गत हैं। इस क्षेत्र का क्षेत्रफल कुल 12,635 वर्ग मील है। पूरे राज्य में औसत की तुलना में दो-फसली भूमि इस सम्भाग में बहुत कम है। नगदी फसलों का अनुपात भी बहुत कम है।

इस क्षेत्र की कुल जनसंख्या लगभग 30 लाख है जो राज्य की कुल आबादी का 9.2 प्रतिशत (6.7 प्रति शत ग्रामीण एवं 2.3 प्रति शत शहरी) है। आबादी का घनत्व 230 व्यक्ति प्रति वर्ग मील है जो पूरे राज्य की आबादी के घनत्व की तुलना में बहुत अधिक है। यहां प्रति मील आबादी का घनत्व सन् 1901 से बढ़ रहा है। प्रति 1000 पुरुष के पीछे पूरे राज्य के 953 की तुलना में यहां 940 स्त्रियां हैं। गत साठ वर्षों में इस क्षेत्र की आबादी 61.2 प्रतिशत बढ़ी है।

इस अध्ययन का प्रमुख उद्देश्य, उत्तरी महाकोशल में कृषक रोजगारी की स्थितियों की तथा खेती में ही और अधिक रोजगार मुहैया करने में इस इलाके को जिन मुख्य समस्याओं का सामना करना पड़ रहा है उनकी जांच करना था। क्षेत्र में सर्वेक्षण करते समय कृषक बेरोजगारी और अल्प बेरोजगारी की प्रवृत्ति और उसकी सीमा का पता लगाने का प्रयास किया गया, ताकि उसकी गंभीरता और जटिलता का उचित मूल्यांकन किया जा सके। मोटे तौर पर इस अध्ययन के तीन उद्देश्य थे : (1) इलाके के कृषि क्षेत्र में रोजगारी, बेरोजगारी और अल्प बेरोजगारी की सीमा को प्रत्यक्ष करना, (2) खेती में रोजगार के अवसरों से सम्बन्धित नीति निर्धारण में नीति-निर्माताओं को व्यावहारिक और बुनियादी आंकड़े प्रदान करना तथा (3) कृषक बेरोजगारी और अल्प बेरोजगारी के कारणों का पता लगाना और लाभपूर्ण कार्यों के लिए सुलभ कार्यशील जनसंख्या के लोगों के पास बचने वाले खाली समय की सीमा की जानकारी प्राप्त करना। इस सर्वेक्षण में अत्यन्त, मध्यम और नाममात्र के अल्प रोजगार प्राप्त लोगों को अलग-अलग करने के लिए जिस मानदण्ड को अपनाया गया है वे भारतीय सांख्यिकीय संस्थान द्वारा जैसे सुझाये गये हैं वैसे ही हैं।

हेमचन्द जैन

क्षेत्र की आर्थिक रूप से सक्रिय कुल आबादी का आकलन करने के लिए जिन व्यक्तियों को सम्मिलित किया गया, वे 10 से 60 वर्ष के आयु समूह के बीच थे। आर्थिक रूप से सक्रिय आबादी का पता लगाने के लिए सर्वेक्षण में चालू क्रियाकलाप के मानदण्ड का अनुसरण किया गया।

समस्यामूलक स्थिति के सूक्ष्म सर्वेक्षण के लिए प्रत्येक चुने हुए गांव से कुल खेतिहर परिवारों के 10 प्रतिशत परिवारों को चुना गया जिनमें जोतों के आकार के अनुसार भूमिहीन और भूमियुक्त परिवारों पर बराबर ध्यान दिया गया।

उत्तरी महाकोशल की आबादी के आर्थिक स्तर से पता चलता है कि कृषि क्षेत्र की लगभग 30 प्रतिशत सक्रिय आबादी, लगभग 70 प्रतिशत निष्क्रिय और अर्धसक्रिय आबादी का भरण-पोषण करती है। पूरे सम्भाग की कुल आबादी का 50 9 प्रतिशत ही कार्यशील शक्ति के रूप में है और इसमें 70 प्रतिशत लोग कृषि में सक्रिय हैं, जबकि इसके मुकाबले ग्रामीण आबादी में, कार्यशील शक्ति का अनुपात लगभग 52 प्रतिशत है, जिसका 81 प्रतिशत कृषि में लगा हुआ है। अपना भरण-पोषण स्वयंक रनेवाली कार्यशील शक्ति का अनुपात पूरे क्षेत्र में लगभग 63 प्रतिशत है तथा शेष कार्य शील शक्ति पूर्णतया और अंशतः परावलम्बी है। संपूर्ण और मात्र कृषि क्षेत्र की कार्यशक्ति में स्त्रियों का प्रातिशत्य क्रमशः 36 और 40 हैं। पूरे राज्य की तुलना में ग्रामीण कार्यशील शक्ति के काम में हिस्सा लेने की नीची दर के कारण कृषि कार्य के मोसम में श्रम के अभाव की समस्या उत्पन्न हो जाती है जिसके फलस्वरूप कृषि विकास में बाधा आयी है और खेत परती रह गये हैं। फसल की कटाई के समय स्थानीय रूप से उपलब्ध मजदूरों के अलावा आस-पास के जंगली इलाकों और पास-पड़ोस के क्षेत्र से मजदूरों के आने पर ही काम हो पाता है।

अध्ययन क्षेत्र में परिवार का औसत आकार 4.3 व्यक्ति प्रति परिवार है, जिसमें 2·1 पुरुष और 2.2 स्त्रियां हैं। एक परिवार में औसतन 1.9 व्यक्ति (1.2 पुरुष और 0.7 स्त्रियां) सक्रिय और शेष 2.4 व्यक्ति (0.9 पुरुष और 1.5 स्त्रियां) निष्क्रिय हैं। सक्रिय आबादी में पुरुषों की संख्या स्त्रियों से अधिक है, इसके विपरीत निष्क्रिय व्यक्तियों में

स्त्रियों की संख्या पुरुषों से अधिक है।

विश्लेषण से पता चलता है कि स्त्रियों की तुलना में पुरुषों में बेरोजगारी बहुत अधिक थी। 'काम के लिए सुलभ' व्यक्तियों की संख्या में एक जिले से दूसरे जिले में कोई फर्क नहीं पड़ा। केवल दमोह जिला इसका अपवाद है जहां काम के लिए अधिक संख्या में स्त्रियों की सुलभता के कारण 'काम के लिए सुलभ' व्यक्तियों का प्रातिशत्य पूरे क्षेत्र के प्रातिशत्य का दुगुना था।

ऐसे व्यक्तियों का, जो अतिरिक्त अवधि में कामों के लिए अनुपलब्ध थे, वर्गीकरण पूर्णतया कार्यशील वर्ग में किया गया और वे लोग जो अतिरिक्त घंटों में काम के लिए सुलभ थे उनका वर्गीकरण अल्प बेरोजगार के रूप में किया गया, जैसा कि प्रस्तुत तालिका से स्पष्ट है।

कृषि, वन और पशुजन्य उत्पादों एवं ग्रामीण क्षेत्रों में सुलभ स्थानीय कौशल पर आधारित उद्योगों के विकास से खाली समय में पूरे साल भर ग्रामीण लोगों को अधिक कमाई और रोजगार मिलेगा। ग्रामीण क्षेत्रों में खाली समय में रोजगार के अवसर देने के लिए तैयार किये गये ग्रामीण निर्माण कार्यक्रम और ग्रामीण उद्योग परियोजनाओं से ही इस क्षेत्र की स्थिति को सुधारा जा सकता है। आबादी बढ़ने के साथ-साथ अर्थव्यवस्था के औद्योगिक क्षेत्र में किसी प्रगति के अभाव में आबादी को कृषि से हटाकर अन्य क्षेत्रों में लगाये बगैर कृषि पर दबाव बढ़ना निश्चित ही है।

क्षेत्र में रोजगार बढ़ाने की संभावनायें हैं और विशेषत: कई फसल उगाने के लिए सिंचाई सुविधाओं की व्यवस्था करके तथा खेती के लिए कुछ और नयी जमीन को जोत में लाकर अल्प बेरोजगारी घटाने की संभावना तो है ही। श्रम बचतकारी उपकरणों के प्रचलन से कृषि में श्रम की कमी की समस्या को हल किया जा सकता है। यहां कृषि क्षेत्र में आधुनिक प्रणालियों के लिए भी गुंजाइश है, जैसे जल-स्रोतों का बेहतर उपयोग करना, कृषि उत्पादकता को बढ़ाने के लिए उर्वरकों एवं पौध रक्षण रसायनों का पर्याप्त इस्तेमाल करना और ग्रामीण क्षेत्रों में श्रमिकों को भूक्षरण रोकने, वनविकास को बढ़ाने, सड़क निर्माण करने और सार्वजनिक स्वास्थ्य सेवा बढ़ाने के काम में लगाना।

फिलहाल उत्तरी महाकोशल के औद्योगिक ढांचे में लघु-उद्योग केवल जबलपुर जिले में स्थित हैं तथा वहां पर इन उद्योगों के विकास की गुंजाइश भी है। दूसरे जिलों में ऐसे उद्योगों की स्थापना के लिए संभावनाओं का पता लगाया जा सकता है। ऐसा प्रतीत होता है कि इस क्षेत्र में चीनी कारखानों, शीत भंडारों, उर्वरक संयत्रों आदि की स्थापना की जा सकती हैं। इस क्षेत्र में अब भी सीमेंट उद्योग, कृषि, वनोत्पाद एवं उसके उपोत्पाद पर आधारित उद्योगों के विकास और विस्तार की संभावनायें हैं। यद्यपि यहां औद्योगिक क्षेत्र में अधिक रोजगार के अवसर उत्पन्न करने की संभावनायें उज्ज्वल प्रतीत होती हैं, तो भी खेती के वर्तमान भू-क्षेत्र को बढ़ाकर, सघन खेती की विधियों को अपनाकर और देहातों में ग्रामीण उद्योगों का विकास करके खेती में रोजगार बढ़ाने के नये रास्ते भी खोजे जाने चाहिए। सिंचाई और बिजली पैदा करने के क्षेत्रों में नर्मदा घाटी परियोजना के पूरे होने के बाद ही व्यापक भावी सम्भावनाओं की कल्पना की जा सकती है। बंजर और अनजोती, खेती योग्य होते हुए भी बेकार पड़ी जमीन और परती के रूप में वर्गीकृत जमीनों को भी खेती के अन्तर्गत लाया जा सकता है। इस क्षेत्र में खेती बरसात पर निर्भर है जो असाधारण रूप से कम-ज्यादा होती रहती है। इसलिए किसानों के भीतर एक घातक दृष्टिकोण घर कर गया है जो सिंचाई-सुविधाओं के अभाव के कारण उन्हें सघन कृषि की ओर से उदासीन और निष्क्रिय किये हुये है। मौसमी स्थितियों का फसली उत्पादन पर पड़ने वाला प्रभाव उन्नत विधियों के सारे प्रयासों को प्राय: नकार देता है। इसके कारण मनोवैज्ञानिक रूप से किसान खेती की अधिक कीमती उत्पादक विधियों को अपनाने और अतिरिक्त श्रमिकों को काम पर लगाने से डरते हैं, क्योंकि उन्हें भय रहता है कि कहीं खर्च और श्रम दोनों से हाथ न धोना पड़े। इसलिए अधिक रोजगार देने के लिए क्षेत्र में सुलभ सिंचाई-सुविधाओं के सभी स्रोतों का उपयोग करने का प्रयास किया जाना चाहिए। इन उपायों से न केवल कृषि का उत्पादन बढ़ेगा बल्कि खेती में ही रोजगार के अधिक अवसर मिलेंगे।

('खादी ग्रामोद्योग' से साभार)

उत्तरी महाकोशल में कार्यशील आबादी का आकलन

(आंकड़े प्रतिशत में)

वर्ग/मद	व्यक्ति	पुरुष	स्त्रियां
1. आर्थिक रूप से निष्क्रिय	64.5	24.2	40.3
2. आर्थिक रूप से सक्रिय	35.5	27.1	8.4
3. कार्यशील लोग—कुल जनसंख्या के	30.8	24.5	6.3
—आर्थिक रूप से सक्रिय आबादी के	86.7	9.0	17.7
4. काम के लिए सुलभ लोग—कुल आबादी का	4.7	2.	2.1
—आर्थिक रूप से सक्रिय आबादी का	13.3	7.4	5.9
5. अल्पबेरोजगारी (अतिरिक्त काम के लिए सुलभ कार्यशील व्यक्ति)—कुल आबादी की	9.3	9.1	0.2
—आर्थिक रूप से सक्रिय आबादी की	2.2	25.5	0.7
—कार्यशील व्यक्तियों की	30.2	29.3	0.9

समृद्धि के लिए पम्प का प्रयोग

विशाल रेगिस्तान में भूमि का एक हराभरा टुकड़ा ऐसा लगता था मानो यह बीदर के सान्नाहाली खेड़ा गांव में आने वाले अतिथियों का स्वागत कर रहा हो। फरवरी के महीने में जब सूखा पड़ रहा होता है तो भी कहीं-कहीं थोड़ी-बहुत हरियाली दिखाई दे जाती है। इसका सारा श्रेय उस क्षेत्र में भूमि को छेदकर खोदे गए एकमात्र कुएं को जाता है। मनुष्य द्वारा निर्मित नखलिस्तान में यह कुआं प्रत्येक व्यक्ति को चारों ओर हरियाली का आभास कराता है।

कर्नाटक में बार-बार पड़ने वाले सूखे के कारण यह बहुत जरूरी हो गया था कि भूमि के नीचे विद्यमान विशाल जलराशि को निकाल कर उसका प्रयोग किया जाए। इस महत्वपूर्ण कार्य की आवश्यकता को समझने के बाद ही भूमिगत जल का प्रयोग करने के लिए मास्टर प्लान बनाया गया। इस जल के प्रयोग को नियन्त्रित करने के लिए एक विधेयक भी तैयार किया गया है। राज्य के कई क्षेत्रों के कुओं में पानी का स्तर घट गया है।

चार लाख हैक्टेयर खेती योग्य भूमि की सिंचाई के लिए कर्नाटक में 3 लाख 50 हजार कुएं हैं। अभी भी 12 लाख 25 हजार हैक्टेयर भूमि की सिंचाई के लिए 7 लाख कुएं खोदे जा सकते हैं।

इस प्रकार भूमि के नीचे विद्यमान जल भण्डार में से 1,05,940 लाख घन मीटर जल प्राप्त किया जा सकेगा। इस समय इसके लगभग चौथाई भाग जल का प्रयोग किया जा रहा है।

कर्नाटक उन बहुत थोड़े से राज्यों में से है जहां भूमिगत जल सर्वेक्षण यूनिट की स्थापना की गई है। सात वर्ष पहले स्थापित की गई इस यूनिट ने 107 ताल्लुकों में प्रारम्भिक सर्वेक्षण पूरा कर लिया है। इस सर्वेक्षण का प्रथम चरण 1974 के अन्त तक पूरा होने की आशा है।

भूमिगत जल इकट्ठा करने और बाहर भेजने के लिए कर्नाटक में उचित व्यवस्था नहीं है। इस समय सिंचाई के अधिकतर कुएं बंगलौर, बेलगांव, बीजापुर, कोलार, दक्षिण कनारा और तुमकुर जिलों में ही हैं। सिंचाई के लिए कुओं में से लगभग 50 प्रतिशत में सिंचाई के लिए पम्प सैट लगाए हुए हैं।

हाल में सिंचाई कार्यक्रम को बढ़ावा दिया गया है और कुओं की सिंचाई के अनेक कार्यक्रमों के लिए बैंकों से भी सहायता ली गई है। राज्य में ग्रामीण विद्युतीकरण के कार्यक्रम के कारण कुओं और इनके चलाने के लिए बिजली की मांग बढ़ गई है। मार्च, 1974 के अन्त तक 26,826 गांवों में से 13,000 से अधिक गांवों में बिजली पहुंच चुकी होगी। राज्य की पांचवीं योजना के अनुमानित ममविदे के अनुसार 1973-74 के अन्त तक कुओं की संख्या साढ़े तीन लाख से अधिक हो जाएगी। इनमें से 1 लाख 90 हजार कुएं बिजली से चलाए जाएंगे। कृषि पुनर्वित्त निगम ने भी लघु सिंचाई की 13 लघु योजनाओं को स्वीकृति दी है। इन योजनाओं के अन्तर्गत सिंचाई के 19,000 कुएं और 17,315 से अधिक पम्प सैट लगाए जाएंगे। इनमें से 7,192 कुओं का निर्माण पूरा हो चुका है और 3,506 पम्प सैट लगाए जा चुके हैं।

कर्नाटक राज्य के भूमि विकास बैंक ने 86,200 कुओं के निर्माण के लिए धन की स्वीकृति दे दी है। इसके अलावा इसने लघु कृषक विकास एजेन्सी और सीमान्त कृषक और खेतिहर मजदूर अभिकरण की 5,541 कुएं और 1,130 पम्प सैट लगाने की योजनाओं में भी सहायता दी है। मैसूर कृषि ऋण परियोजना भी कुओं द्वारा सिंचाई की एक अन्य बड़ी योजना है। विश्व बैंक द्वारा सहायता प्राप्त परियोजना में कुओं की सिंचाई और उठाऊ सिंचाई (लिफ्ट इरिगेशन) पर 18 करोड़ 55 लाख रु० व्यय करने की व्यवस्था है।

भूविज्ञान के हिसाब से कर्नाटक राज्य दक्षिणी पठार का एक भाग है। कड़ी चट्टान के क्षेत्र में आने के कारण इस क्षेत्र में भूमि से पानी निकालना बहुत कठिन कार्य होगा। इसलिए मास्टर प्लान के अन्तर्गत नदियों द्वारा सिंचित प्रदेशों का अध्ययन किया जा रहा है। प्रयोग के तौर पर अरकावती, चिक्कागेरी, कारांजा और सतनाला— इन चार नदियों द्वारा सिंचित प्रदेशों का अध्ययन किया जा रहा है।

इस योजना में 1988-89 तक औद्योगिक और घरेलू काम में प्रयोग किए जाने वाले भूमिगत जल का मूल्यांकन किया जाएगा और स्थानीय परिस्थितियों के अनुकूल कुओं के डिजाइन में सुधार भी किया जाएगा। कुओं को फिर से चालू करना इस योजना की महत्वपूर्ण विशेषता है। पचास प्रतिशत कुओं को फिर से चालू किया जाएगा। एक नए कुएं से औसतन लगभग 1.5 हैक्टेयर भूमि की सिंचाई की जाती है, जबकि एक पुराने कुएं द्वारा 0.5 हैक्टेयर भूमि की सिंचाई की जाती है। इस योजना के अन्तर्गत दो करोड़ रु० की लागत से प्रतिवर्ष 10,000 कुओं को फिर से उपयोगी बनाने की व्यवस्था है।

खुदाई करके बनाए जाने वाले 15,000 कुओं, भूमि में छेद करके बनाए गए 5,000 कुओं और 10,000 कुओं को फिर से चालू करने की वार्षिक योजना में लगभग 26 करोड़ रु० व्यय किए जाएंगे। इतनी अधिक पूंजी के निवेश से 31,000 हैक्टेयर अतिरिक्त भूमि में दो फसलें उगाने के लिए सिंचाई करना सम्भव हो सकेगा।

भूमिगत जल सार्वजनिक सम्पत्ति है। इसका वितरण भी भण्डार में इकट्ठे किए जल की तरह बुद्धिमानी से किया जाना चाहिए। □

सहकारी खेती : उद्देश्य और लाभ

देवकीनन्दन पालीवाल

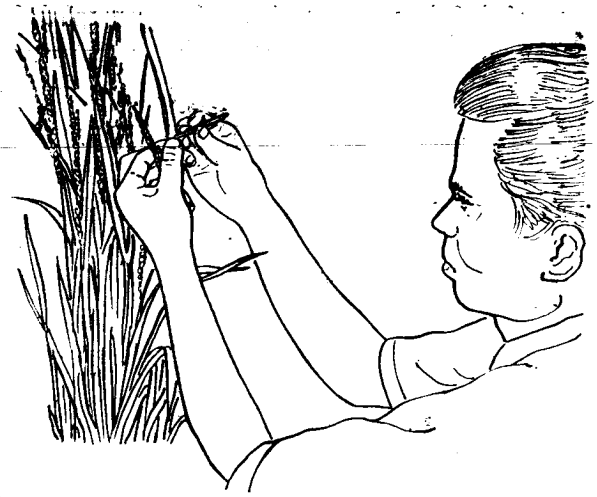

सहकारी खेती स्थानीय साधनों का उपयोग करके भूमि से अधिकतम लाभ प्राप्त करने के लिए मिलजुलकर काम करने का एक तरीका है। इसके अनुसार कुछ किसान खेती की पैदावार और अपनी आमदनी बढ़ाने के लिए स्वेच्छापूर्वक अपनी भूमि, पूंजी, खेती के आवश्यक साधन शामिल करके एक संगठन बना लेते हैं और मिलजुलकर काम करते हैं। भूमि पर उनका अपना अपना मालिकाना अधिकार रहता है। भारत में सहकारी खेती की सिफारिश करते हुए महात्मा गांधी 'हरिजन सेवक', 9-7-47 में लिखते हैं कि 'सहकारिता से, मिलजुलकर काम करने से, मेरा मतलब है कि सब जमीन-मालिक मिलजुलकर जमीन पर अधिकार रखें और जोतने, बोने, फसल काटने वगैरा का काम भी मिलजुलकर ही करें। इससे काम, पूंजी, औजारों वगैरा की बचत होगी। जमीन-मालिक मिलजुलकर खेती में काम करेंगे और पूंजी, औजार, जानवरों और बीज पर उनका मिला-जुला अधिकार होगा।" खेती का यह तरीका आमतौर पर सभी किसानों के लिए लाभदायक है; छोटे किसानों के लिए, विशेषकर भूमिहीन किसानों के लिए तो यह बहुत ही लाभदायक है।

सहकारी खेती का मुख्य उद्देश्य खेती की पैदावार बढ़ाना और गांवों की बेरोजगारी दूर करना है। खेती की पैदावार बढ़ाने के लिए सहकारी खेती समिति अपनी जमीन को सुधारने और उससे अधिकतम पैदावार लेने के लिए विविध कार्यक्रम तैयार करती है और उन्हीं कार्यक्रमों के अनुसार कार्य करती है। सिंचाई के साधनों की व्यवस्था करती है, जिससे सिंचाई की कमी या असुविधा से फसलें लगातार उगाने में किसी प्रकार की बाधा न पड़े। समिति विभिन्न फसलें उगाने के लिए योजनाएं और फसलचक्र तैयार करती है और उनसे अधिकतम पैदावार लेने के लिए नवीनतम वैज्ञानिक तरीके अपनाती है। ये सब बातें एक साधारण किसान के लिए सम्भव नहीं है। वह व्यक्तिगत रूप से इनको अपनाने और इनसे लाभ उठाने की कल्पना भी नहीं कर सकता।

यही नहीं, सहकारी खेती के वैज्ञानिक तरीकों को अपनाने के साथ-साथ विभिन्न कामों का बंटवारा इस तरह किया जाता है कि सारे काम सुचारु रूप से और समय पर सम्पन्न होते रहते हैं, और सभी को काम मिलता रहता है। इस पद्धति में न तो समय बरबाद होता है, न किसी की मेहनत बेकार जाती है, और खेती के सारे काम भी सुगमता से होते रहते हैं।

देश की आबादी निरन्तर बढ़ते जाने के साथ व्यक्तिगत रूप से किसान की जमीन कम होती जा रही है। आज से पच्चीस-तीस साल पहले जिस परिवार के पास पांच एकड़ जमीन थी, वह अब उसके पांच सदस्यों में बंटकर हर एक के हिस्से में केवल एक-एक एकड़ रह गई है। क्या यह सम्भव है कि उस पांच एकड़ भूमि में आज से पच्चीस-तीस साल पहले जितनी अच्छी तरह खेती होती थी, आज भी उतनी ही अच्छी तरह हो रही होगी? उत्तर स्पष्ट है। आज उसके एक-एक एकड़ के छोटे-छोटे पांच टुकड़े हो चुके हैं। एक एकड़ में खेती के लिए किसान न अपना कुंआ बना सकता है और न अपनी बैलों की जोड़ी रख सकता है। उसे लाचारी में अपनी जमीन किसी बड़े किसान से पैसे देकर जुतानी होगी या किसी को बटाई पर देनी होगी और उसकी सिंचाई की समस्या अलग। दोनों ही हालतों में उसे अपनी जमीन से पूरी पैदावार नहीं मिल सकेगी। उसे अपना पेट पालने के लिए मजदूरी ही करनी होगी। परन्तु यदि ऐसे कुछ किसान मिलकर अपनी जमीन और खेतीं के साधनों को एकत्र कर लें और मिलजुलकर सहयोग और सहकारिता के आधार पर उसमें खेती करें तो उनकी कठिनाई बहुत आसानी से दूर हो सकती है। इससे उन्हें अपने खेतों से पैदावार भी अधिक मिलेगी और साथ ही अपने लिए और अपने परिवार के लिए काम भी।

सहकारी खेती छोटे-छोटे किसानों के दूर-दूर बिखरे हुए खेतों को एक चक करने और उनसे अधिकतम पैदावार लेने का सर्वोत्तम तरीका है। भूमि एक चक होने से छोटे-छोटे खेतों की मेंड़ों में जो भूमि बेकार घिरी रहती है

वह भी खेती के काम आ जाती है और इस तरह सहकारी खेती की समिति के हर एक सदस्य-किसान के हिस्से में अधिक पैदावार आती है। इससे उसकी आमदनी और भी बढ़ जाती है।

खेती की पैदावार बढ़ाने के लिए आजकल विज्ञान आगे आ रहा है। नित्य नई-नई कृषि-विधियों, अधिक पैदावार देने वाले नए-नए बीजों, मेहनत और समय बचाने वाले औजारों और यन्त्रों का विकास हो रहा है। पौधों को शीघ्र बढ़ाने, पकाने और मजबूत बनाने वाली नई-नई रासायनिक खादों का उत्पादन हो रहा है। अधिक कीमती होने के कारण इनका प्रयोग छोटे किसानों की सामर्थ्य से बाहर है। परन्तु अपनी सहकारी समिति बनाकर वे भी इनको सुगमता से इस्तेमाल कर सकते हैं। यदि पास में पर्याप्त पैसा न हो तो सहकारी समितियों को इनकी खरीद के लिए सहकारी बैंकों से ऋण आसानी से मिल जाते हैं।

यदि किसान के पास जमीन कम है और उसके परिवार में काम करने वाले ज्यादा हैं, तो स्वभावतः उसकी थोड़ी-सी जमीन में खेती से उसके परिवार के सभी सदस्यों को पूरा काम नहीं मिलेगा और उनका बहुत सा समय बेकार जाएगा। इसके विपरीत यदि किसान के पास जमीन अधिक है और उसके परिवार में काम करने वालों की संख्या कम है तो उसकी जमीन का भरपूर उपयोग नहीं होगा और उसके खेती के सारे काम पिछड़े रहेंगे। इसका नतीजा यह होगा कि उसको पैदावार कम मिलेगी। इस प्रकार ये दोनों ही हालतें लाभदायक नहीं है। यदि इन दोनों तरह की जोतों को शामिल कर लिया जाए और फिर उसमें शामिलात सघन खेती की जाए तो निश्चय ही दोनों परिवारों को पहले से अधिक पैदावार मिलेगी और उनके सदस्यों को पूरा काम भी मिलेगा। यहां जो बात इन दो परिवारों के लिए सही है, वही बात दो से अधिक परिवारों के शामिल होने पर और ज्यादा लाभदायक रहेगी। सहकारी खेती से भूमि और श्रम का अधिकतम उपयोग होने से खेती की प्रति इकाई लागत भी घट जाएगी और इस तरह सदस्य-किसानों को आर्थिक लाभ अधिक होगा।

हमारे देश में काफी बेकारी है—पढ़े लिखे और बेपढ़े दोनों तरह के लोगों में। सहकारी खेती इस बेकारी को दूर करने में काफी मदद कर सकती है। सहकारी खेती से खेती की पैदावार बढ़ेगी, समिति के सदस्य-किसानों की माली हालत सुधरेगी और इस तरह गांवों में पैसा बढ़ेगा। उस पैसे को गांवों में नए उद्योग-धन्धे चलाने के लिए इस्तेमाल किया जा सकता है। यदि गांवों में उद्योग-धन्धे लगेंगे तो उनमें पढ़े और बेपढ़े दोनों ही तरह के काफी लोगों को रोजगार मिल सकेगा और इस तरह गांवों की बेकारी दूर करने में मदद मिलेगी।

यदि सहकारी खेती समितियां काफी बड़ी होती है और उनके पास खेती के लिए काफी जमीन होती है तो उनके सदस्यों की आमदनी भी काफी होती है। वे अपने सदस्यों की सहायता से सहकारी आधार पर खेती पर आधारित सहायक उद्योग-धन्धे आरम्भ कर सकती हैं—जैसे डेयरी फार्म, मुर्गीपालन, सब्जियों और फलों की डिब्बाबन्दी, तेल निकालने का कोल्हू, आटा चक्की, गुड़-शक्कर बनाने का काम, आदि। इन धन्धों से काफी लोगों को रोजगार दिया जा सकता है।

सहकारी खेती का सबसे बड़ा लाभ यह है कि इससे गांवों में परस्पर मिल-जुलकर काम करने और हर एक दैनिक और सामाजिक कार्य में परस्पर सहयोग करने की स्वस्थ भावना का विकास होता है। इससे लोगों के मन में चले आ रहे पुराने मैल धुल जाते हैं। गांव के समाज में शान्ति और प्रेम की गंगा बहने लगती है। लोगों के पास निरन्तर पैसा आते रहने से उनकी खुशहाली बढ़ती जाती है और उसके फलस्वरूप उनका जीवन-स्तर ऊंचा उठता जाता है।

व्यक्तिगत खेती में आए दिन कोई न कोई झगड़ा खड़ा होता ही रहता है। कभी नहर के पानी के ऊपर, कभी मेंड़-बन्धी में पड़ौसी की जमीन दब जाने पर, कभी खेत में पड़ौसी के जानवर आने पर, कभी चोरी से फसल काट लेने पर झगड़े होते ही रहते हैं। पटवारी, कानूनगो, पतरौल, नम्बरदार, आदि भी किसानों को बहुत तंग करते हैं। यदि किसान मिलकर खेती के लिए एक सहकारी समिति बना लें तो उनको आए दिन दुःख देने वाले ये सारे झगड़े और झंझट अपने आप मिट जाते हैं, और उनका जीवन शान्ति से बीतता है। वे दृढ़ता से उन्नति के पथ पर बढ़ते जाते हैं।

कुछ लोगों का कहना है कि सहकारी खेती से खेती में मशीनों का इस्तेमाल बढ़ेगा। सारे काम मशीनों से होने से कम आदमियों की जरूरत होगी और इस तरह गांवों में बेकारी बढ़ेगी। परन्तु यह शंका ठीक नहीं है। हर एक समिति अपनी भूमि और साधनों के आधार पर ही यह फैसला करती है कि उसे अपने फार्म में सघन खेती के लिए आधुनिक यन्त्रों की आवश्यकता है या नहीं। काम ज्यादा है, भूमि काफी है और फार्म में काम करने वालों की कमी है तो ऐसी हालत में खेती के काम समय पर करने के लिए आधुनिक मशीनों का इस्तेमाल जरूरी है। उत्तर प्रदेश, बिहार, पश्चिम बंगाल, आन्ध्र प्रदेश, उड़ीसा, केरल और देश के अन्य घने भागों में, जहां आबादी घनी है, खेती का काम मशीनों की अपेक्षा हाथ से ही करना ठीक है। राजस्थान, पंजाब, मध्य प्रदेश आदि राज्यों में जहां भूमि काफी है, मशीनों से काम लेकर ही अधिक पैदावार की जा सकती है। इस प्रकार सहकारी खेती जहां एक ओर खेती की पैदावार बढ़ाती है, वहां दूसरी ओर उसका उद्देश्य अपने सभी सदस्यों को पूरा काम देना भी है। गांवों में लोगों को पूरा काम देने और देश की बढ़ती हुई जनसंख्या के भरण-पोषण के लिए अधिक अन्न पैदा करने का उद्देश्य सहकारी खेती से ही पूरा हो सकता है।

कार्बनिक खाद से उपज बढ़ाइए

डा० एस० आर० बरुआ

कृषि उत्पादन बढ़ाने में उर्वरक बहुत महत्वपूर्ण माना गया है। एक किलोग्राम उर्वरक से औसतन लगभग 10 किलोग्राम अतिरिक्त अनाज पैदा हो सकता है।

दूसरे देशों के किसानों की भांति भारतीय किसान भी उर्वरक की महत्ता के प्रति जागरूक हुआ है। उर्वरक की लगातार बढ़ती हुई मांग इस बात की सूचक है। 1950-51 में इसकी खपत 1 लाख 50 हजार टन थी, जो बढ़कर इस वर्ष लगभग 30 लाख टन हो गई है। अधिक उत्पादन और गहन कृषि कार्यक्रमों के अन्तर्गत और अधिक क्षेत्रों के आ जाने से उर्वरक की मांग में और वृद्धि होगी।

पांचवीं योजना के अन्त तक इसकी मांग लगभग 80 लाख टन होने का अनुमान है। यह मांग देश के उत्पादन से ही पूरी नहीं की जा सकती, क्योंकि उस समय तक देश में केवल 65 लाख टन उर्वरक तैयार होने का अनुमान है। तेल संकट तथा अन्य कारणों से इस पर भी असर पड़ने की सम्भावना है। इसकी उपलब्धि में विश्वव्यापी कमी होने के कारण इसके आयात के भी आसार अच्छे नहीं हैं।

उपलब्ध उर्वरक का अधिकतम उपयोग करने के अलावा कार्बनिक खाद का उत्पादन बढ़ाना ही इस समस्या का एकमात्र हल है। कार्बनिक खाद गोबर, कूड़ा-कर्कट तथा अन्य फैंके जाने वाले पदार्थों से बनाया जा सकता है। विशाल जनसंख्या होने के कारण कार्बनिक खाद बनाने के लिए कूड़ा-कर्कट काफी मिल सकता है।

उर्वरक के साथ कार्बनिक खाद मिलाने से अच्छी फसल होती है और अधिक उत्पादन होता है। कार्बनिक खाद मिट्टी के पोषक तत्वों में वृद्धि करता है। इससे मिट्टी की जल-धारण क्षमता बढ़ती है। इसके अलावा, भूचाल रोकने की क्षमता बढ़ाने में भी कार्बनिक खाद का महत्व है।

इस समय लगभग 3,200 शहरी केन्द्रों में 44 लाख 50 हजार टन कम्पोस्ट खाद बनाई जाती है। ऐसा अनुमान लगाया गया है कि देश के शहरी क्षेत्रों में प्राप्त कूड़े-कर्कट से प्रति वर्ष 1 करोड़ 50 लाख टन खाद (कम्पोस्ट) तैयार की जा सकती है। अच्छे किस्म की शहरी खाद (कम्पोस्ट) में 1.5 प्रतिशत नाईट्रोजन, 1 प्रतिशत फास्फेट और 1.5 प्रतिशत पोटाश होता है।

देश में प्रतिदिन 90 करोड़ गैलन ऐसा पानी उपलब्ध है जो मलमूत्र को बहाकर गन्दे नालों में ले जाता है। लेकिन इसमें से केवल 25 करोड़ गैलन का सिंचाई के लिए प्रयोग किया जाता है। गन्दे पानी का सिंचाई के लिए प्रयोग करने से पौधों के लिए पोषक तत्व मिलेंगे।

बड़ी मात्रा में पाए जाने वाले कूड़े-कर्कट की खाद बनाने के लिए कृषि-मन्त्रालय ने एक विस्तृत कार्यक्रम तैयार किया है। पांचवीं पंचवर्षीय योजना के दौरान इसके लिए केन्द्र-समर्थित कार्यक्रम के लिए 9 करोड़ रुपये की व्यवस्था की गई है। राज्य सरकारों ने भी इस कार्यक्रम के लिए 9 करोड़ रुपये दिए हैं।

शहरी कूड़ा-कर्कट से खाद तैयार करने के कार्यक्रम के अन्तर्गत पांचवीं योजना के अन्त तक एक वर्ष में साढ़े सात करोड़ टन खाद (कम्पोस्ट) तैयार करने का प्रस्ताव है। इससे 1 लाख 12 हजार टन नाइट्रोजन, 75 हजार टन फास्फेट और 1 लाख 12 हजार टन पोटाश मिलने की सम्भावना है। गांवों और खेतों में इस समय 15 करोड़ 80 लाख टन खाद तैयार होती है। इसे बढ़ाकर 35 करोड़ टन करने का प्रस्ताव है।

पांचवीं योजना में गन्दे पानी को सिंचाई के लिए प्रयोग करने के लिए 300 कार्यक्रम आरम्भ करने का प्रस्ताव है। इससे 8,000 हेक्टेयर भूमि में सिंचाई की जा सकेगी।

इन कार्यक्रमों के पूरा होने पर 2,000 टन नाइट्रोजन, 800 टन फास्फेट और 2,500 टन पोटाश प्राप्त हो सकेगी। ये सभी पोषक तत्व लगभग 1 करोड़ 25 लाख रुपये के मूल्य के होंगे। इनसे लगभग प्रतिवर्ष 25 हजार टन अतिरिक्त अनाज पैदा किया जा सकता है।

खेतों में कूड़ा-कर्कट से खाद बनाने के बारे में किसानों को सलाह देने के लिए परामर्श सेवा उपलब्ध है। पंचायतों को यह सलाह दी गई है कि वे आगामी वर्षों में पौधों के लिए पोषक तत्वों की बढ़ती हुई मांग पूरी करें। □

रोजगार के लिए विशेष कार्यक्रम

संसद के विगत शीतकाली अधिवेशन की कार्यवाइयों में यदा-कदा जो तथ्य उभर कर सामने आए उनसे केन्द्र, राज्य और संघशासित सरकारों द्वारा बेकारी से निपटने के लिए जो प्रयास कुछ वर्षों से हो रहे हैं, उन पर अच्छा प्रकाश पड़ता है।

रोजगार के यथेष्ठ अवसर के लिए सभी पंचवर्षीय योजनाओं में व्यवस्था की जाती रही है। पर कुछ कारणोंवश समस्या पर काबू नहीं पाया जा सका। तीसरी योजना के दौरान बाह्य आक्रमणों, सूखा (1965-66) और मन्दी (1966-68) के कारण स्थिति पहले से भी गम्भीर हो गई। बढ़ती हुई जनसंख्या और शिक्षा व आवागमन के साधनों में हुए प्रसार ने भी समस्या को जटिल बनाने में योग दिया।

चौथी योजना के आरम्भिक वर्षों में हुई 'हरित क्रान्ति', कुछ राज्यों तक ही सीमित होने के कारण बेकारी की समस्या के समाधान में प्रभावकारी भूमिका नहीं निभा सकी। भगवती समिति (1970-73) के अनुसार 1971 में बेकारों की कुल संख्या लगभग 1.87 करोड़ थी जिनमें 161 करोड़ गांवों में और बाकी 26 लाख शहरों में थे। समिति ने बेकारों की श्रेणी में ऐसे लोगों को भी रखा है जिन्हें सप्ताह में 14 घण्टे से कम काम मिलता है।

कुल बेकारों की संख्या में शिक्षित बेकारों की संख्या एक छोटा पर महत्वपूर्ण अंश है। पर कुल बेकारों की तरह शिक्षित बेकारों के ठोस और अधिकारपूर्ण आंकड़ों का बराबर अभाव रहा है। जो आंकड़े प्राप्त हैं, वे कुछ श्रेणी के ही हैं। अपने कार्यक्रमों को यथार्थवादी और प्रभावी बनाने के उद्देश्य से योजना आयोग ने 1955 में एक अध्ययन दल गठित किया था। राष्ट्रीय नमूना सर्वेक्षण (एन. एस. एस.) के सम्बन्धित आंकड़ों की छानबीन के बाद दल ने 1955 में शिक्षित बेकारों की संख्या को 5.5 लाख निर्धारित किया (दांते वाला समिति, 1969-70.) औद्योगिक—वैज्ञानिक अनुसन्धान परिषद के मतानुसार 1971 में डिग्री और डिप्लोमाधारियों की संख्या 4.21 लाख थी।

रोजगार के अवसर प्रदान करने के लिए चौथी योजना के प्राय: सभी क्षेत्रों में पर्याप्त व्यवस्था की गई है। इनके अतिरिक्त, समय-समय पर और विभिन्न क्षेत्रों में उपस्थित समस्याओं के निवारण के लिए अनेक विशेष कार्यक्रम चालू किए गए हैं। इन कार्यक्रमों में कुछ का संक्षिप्त ब्यौरा निम्न प्रकार है :—

इस कार्यक्रम की शुरूआत 1971-72 में की गई थी। इसके अन्तर्गत देश की प्राकृतिक सम्पदा और भावी परियोजनाओं के सर्वेक्षण तथा जांच पड़ताल, प्राईमरी शिक्षा के स्तर सुधारने, अपना धन्धा चलाने वालों के लिए सहायता, उपभोक्ता सहकारी भण्डारों के विस्तार इत्यादि के लिए कई कार्यक्रम चलाए जा रहे हैं जिनसे शिक्षितों तथा उच्च-स्तर के वैज्ञानिकों, इंजीनियरों और तकनीशियनों को रोजगार मिला है। 1971-72 और 1972-73 में क्रमश: 45,000 और 68,000 अतिरिक्त लोगों को काम मिला था। केन्द्र से राज्यों को इन दो सालों में कमश: 9.81 करोड़ रुपए और 49.40 करोड़ रुपए दिए जा चुके हैं। 1973-74 के केन्द्रीय बजट में इस कार्यक्रम के लिए 48.26 करोड़ रुपए की व्यवस्था है।

रोजगार प्रदान करने के काम में राज्यों और संघशासित क्षेत्रों को सम्मिलित करने के उद्देश्य से यह कार्यक्रम 1972-73 में आरम्भ किया गया था। केन्द्र की ओर से इसके लिए 27 करोड़ रुपए की व्यवस्था थी। लाभ उठाने के इच्छुक राज्यों और संघशासित क्षेत्रों को अनुदान के बराबर की रकम अपनी ओर से लगानी थी। वित्तीय तंगी के कारण कुछ ही राज्य इस कार्यक्रम में शरीक हो सके। फलत: 1972-73 में 40 करोड़ रुपए के खर्च से 3.70 लाख लोगों को रोजगार दिए गए जिनमें 11,000 इंजीनियरों सहित 50,000 शिक्षित थे। इस कार्यक्रम के लिए 1973-74 के केन्द्रीय बजट में 23 करोड़ रुपए की व्यवस्था है।

उपर्युक्त कार्यक्रमों के बावजूद जब शिक्षितों में बेकारी बढ़ती ही गई तो 1973-74 में भारत सरकार ने 5 लाख शिक्षितों को रोजगार उपलब्ध कराने के लिए एक विशेष कार्यक्रम तैयार किया। इस कार्यक्रम के लिए 100 करोड़ रुपए की व्यवस्था की गई है। इस कार्यक्रम के मुख्य अंग हैं :—

अपना धन्धा शुरू करने वालों के लिए वित्तीय सहायता, इंजीनियरों, वैज्ञानिकों तथा तकनीशियनों को रोजगार देने वाले निजी नियोजकों के लिए अनुदान तथा पंचवर्षीय योजना में शिक्षा, सहयोग, स्वास्थ्य सेवा और कृषि विस्तार के क्षेत्रों में बढ़ी जनशक्ति की मांग को पूरा करने के लिए उपयुक्त व्यक्तियों को छात्रवृत्ति देकर प्रशिक्षित करना।

भिन्न-भिन्न राज्यों तथा संघशासित क्षेत्रों के इस प्रकार के कार्यक्रमों पर योजना आयोग की स्वीकृति मिल चुकी है और उन पर कार्रवाई आरम्भ हो चुकी है।

इस कार्यक्रम का उद्देश्य देश के प्रत्येक जिले में एक-एक हजार लोगों को वर्ष के 10 महीने तक काम देना था। इसे 1971-72 में आरम्भ किया गया और 31.22 करोड़ रुपए के खर्च से 8 करोड़ जन-दिन के रोजगार उपलब्ध कराए गए। 1972-73 के दौरान 13.04 करोड़ मानव-दिन के रोजगार दिए गए जिस पर 47.11 करोड़ रुपए खर्च हुए हैं।

ग्रामीण दुर्बल वर्ग यानी छोटे तथा सीमान्त किसान और खेतिहर मजदूरों की स्थिति सुधारने के लिए इस कार्यक्रम को 1969-70 में शुरू किया गया था। दिसम्बर, 1972 तक ऐसे 30 लाख लोगों का पता लगा लिया गया था, जिन्हें इस कार्यक्रम के अन्तर्गत सहायता दी जा सकती है। इनमें 13 लाख लोगों को सहकारी समितियों का सदस्य भी बना लिया गया है। 1972-73 के दौरान इस कार्यक्रम पर 17.32 करोड़ रुपए खर्च हुए थे। □

पहला सुख निरोगी काया

मसूरिका : एक भयंकर बीमारी

वैद्य भूदेव वर्मा भिषगाचार्य

प्राय: सारे भारतवर्ष में वसन्त ऋतु में मसूरिका (चेचक) रोग का प्रसार होता है। यह रोग प्राय: आबाल वृद्ध सभी को होता है। किन्तु इस रोग से प्रभावित प्राय: छोटे बच्चे ही अत्यधिक कष्ट पाते हैं। आज की चिकित्सा समीक्षा के बाद चेचक के टीके लगाए जाते हैं किन्तु हम यह देखते हैं कि चेचक का टीका लग जाने के बाद भी अत्यधिक भयंकरता के साथ इस रोग का प्रसार होता है तथा यह कभी-कभी जनपदोध्वंसकारी बन जाता है। आयुर्वेद शास्त्र में वर्णित हिताहित भोजन एवं शास्त्रोक्त वर्णित दिनचर्या एवं ऋतुकाल के मुताबिक जीवनयापन करने से इस प्रकार के रोगों का आक्रमण होने का भय कम रहता है।

मसूरिका रोग : चरपरे, खट्टे, परस्पर विरुद्ध पदार्थ खाने से अधिक भोजन करने से लोबिया (रमास), उड़द तथा मीठे खट्टे आदि शाकों को खाने से, विषैले पुष्पादिक के संसर्ग से दूषित हुई वायु और जल के योग से वातादि दोष कुपित होकर दूषित रक्त के साथ मिलकर मसूर की दाल के समान फुन्सियां शरीर में निकलती हैं। इसी को मसूरिका रोग के नाम से पुकारा जाता है।

मसूरिका के पूर्व रूप :—जब मसूरिका होने को होती है तो प्रथम ज्वर आता है, खुजली होती है, वदन टूटने लगता है। किसी पदार्थ पर खाने की रुचि नहीं रहती। भ्रम होता है। शरीर की त्वचा पर शोथ तथा आंखों में सुर्खी आदि लक्षण होते हैं।

मसूरिका के भेद :—**वातज मसूरिक के लक्षण** :—फुन्सी काली, सुर्ख, रूखी तथा अत्यधिक वेदना सहित कठिन तथा देर से पकने वाली वातज मसूरिका के लक्षण हैं।

पित्तज मसूरिका के लक्षण :—पित्त के प्रकोप से उत्पन्न हुई मसूरिका में सन्धि और पोरुओं में भेदन सरीखी पीड़ा होती है। खांसी, कफ तथा किसी पदार्थ में खाने की इच्छा का न होना। तालू, होठ तथा जीभ सूख जाती है। फुन्सी लाल, पीली, सफेद, दाह युक्त, तीव्र पीड़ा युक्त और तत्काल पक जाती हैं।

रक्तज मसूरिका :—रुधिर के कुपित होने से जो मसूरिका होती है उसमें दस्तों का होना, अंगों का टूटना, दाहतृषा का लगना, अरुचि, मुख में पाक, आंखों का पकना तथा अत्यन्त तीव्र ज्वर होता है।

कफज मसूरिका :—कफ के प्रकोप से जो मसूरिका उत्पन्न होती है वह सफेद, चिकनी, अत्यन्त मोटी, खुजली, वेदनावाली और बहुत समय में पकने वाली होती हैं।

इस प्रकार त्वग्गत, रक्तज, पित्तज, कफ कफपित्तज मसूरिका के रोगी सुख साध्य होते हैं।

वातज, वात पित्तज, वात कफज, ये कृच्छ साध्य मसूरिका के लक्षण हैं। सन्निपातज मसूरिका के रोगी असाध्य होते हैं।

मसूरिका के असाध्य लक्षण :—खांसी, हिचकी, तथा बुखार की तेजी, प्रलाप, बेचैनी, बेहोशी, प्यास, जलन, तथा मुंह से खून का आना आंख से, नाक से खून का आना तथा गले में धुरघुराहट तथा भयंकर श्वास का चलना। इस प्रकार के रोगी को असाध्य समझना चाहिए।

मसूरिका के उपद्रव :—चेचक के बाद हाथ की कुहनी के ऊपर अथवा पहुंचे पर अथवा कंधों के ऊपर अत्यन्त दारुण सूजन हो जाए तो उसको कष्ट साध्य समझना चाहिए।

चिकित्सा

शास्त्रोक्त वर्णित अमृतादि कषाय पिलाने से मसूरिका रोगी को शान्ति मिलती है। गिलोय, अडूसा, पटोलपत्र, नागरमौथा, सप्तपर्ण, खैर की छाल, सफेद बेंत के पत्ते, नीम के पत्ते, हल्दी, दारुहल्दी, इन सबका क्वाथ बनाकर शहद डालकर पिलाने से चेचक के रोगी स्वस्थ हो जाते हैं। देवदारु, गुग्गुलु आदि के धूम्र का प्रयोग होने से मसूरिका रोगी को कीड़े आदि पड़ने की स्थिति नहीं होने पाती है। मैं स्वयं वसंतसुन्दर रस के प्रयोग से इस रोग में काफी सफल हुआ हूं। इस औषधि की बलाबल एवं आयु के मुताबिक व्यवस्था करनी चाहिए। स्वर्णमाक्षिक भस्म, चांदी भस्म, अभ्रक भस्म, वंशलोचन, सौंठ इन सबको समान भाग लेकर सिरस के पत्तों के स्वरस के साथ घोटकर मूंग के बराबर गोली बनानी चाहिए तथा इन गोलियों को नियमित रूप से दिन में तीन बार 1-1 रत्ती के अनुपात से शहद के साथ देना चाहिए।

सुभाष रोड़, अलीगढ़

कहानी

संचय

श्रीराम शर्मा 'राम'

गोरधन सुन्दर, जवान और बलिष्ठ। तदनुरूप उसके लहलहाते हुए खेत। रामपुर गांव में इस बात की आम चर्चा थी कि गोरधन भाग्य का बली है। जब मुकद्दर अच्छा होता है, मिट्टी भी सोना बन जाती है। और जब विपरीत दिन हों, तो सोना अपना अस्तित्व छोड़ बैठता है। वह माटी का ढेला बन जाता है।

दोपहर हो आया था। धूप में तेजी आ गई थी। जेठ का महीना। गोरधन हल चला रहा था। उसका मुंह बार-बार गांव की तरफ उठता। सोच रहा था, रामप्यारी रोटी लेकर आए, तो वह बैलों को छोड़ देगा। स्वयं भी पेड़ की छांह में बैठ लेगा। सबसे बड़ी बात यह थी, उसे भूख लगी थी, कुछ-न-कुछ पेट में जाए। आतुर भाव से घरवाली के आने की प्रतीक्षा कर रहा था। रामप्यारी उसकी दुलहन थी। अभी अधिक नहीं हुआ कि जब वह ब्याह कर गोरधन के घर में आई थी। उस अल्हड़ गोरधन को एक निपुण और अध्यवसायी व्यक्ति बनाने में रामप्यारी सफल थी। गांव की औरतों में यह बात प्रायः उठती कि गोरधन की पत्नी भाग्यवान है। आदमी तो सलीके से चला ही, खेतों ने भी साथ दिया है। दिन दूनी, रात चौगुनी वह घर तरक्की कर रहा है।

गोरधन के खेत से गांव दूर नहीं था। दोपहर तक वह आधे से अधिक खेत को जोत चुका था। तभी लाल रंग की चुनरी ओढ़े रामप्यारी खेत पर पहुंची। गोरधन ने बैल छोड़ दिए। छांह में लेजाकर बांध दिए। उनके सामने चारा डाल दिया। जब वह पेड़ के नीचे बैठी रामप्यारी के पास आया तो देखा कि उसका श्रृंगार अपूर्व था। माथे पर बिन्दी, मांग में सिन्दूर और आंखों में सुरमा...देखते ही, गोरधन सहज भाव से मुस्कराया—वाह, आज तो तलवार म्यान से बाहर है। किस को कत्ल करना है, सरकार?

लेकिन बात सुनकर रामप्यारी मुस्करा तो दी, आंखों से झिड़की भी दी—'तुम कैसे हो जी, जब देखो तब, औरत के रूप पर आंख गड़ाते हो।'

गोरधन ने देखा कि रामप्यारी भोजन भी अन्य दिनों की अपेक्षा सुन्दर बना कर लाई थी। खीर थी, कचौरियां थीं, आलू का साग। देखते ही बोला 'आज कुछ था, क्या?'

रामप्यारी ने कहा—'आज जेठ का दशहरा था। सुबह तुम इधर हल-बैल लेकर आए और मैं उधर गई नदी पर स्नान करने। मोहल्ले की कई औरतें गई थीं। आज नदी में स्नान करने का महोत्सव था। पार्वती चाची कहती थी कि जब मैं एक बच्चे की मां बनने वाली हूं तो...''

खाते हुए गोरधन ने कहा—'हां, तो।'

'अरे, चुप भी रहो। तुम तो मेरी सब लाज धोए डालते हो। चाची कहती थी कि लड़का होगा, जरूर-जरूर। अपने बाप पर जाएगा। वैसा ही सुन्दर और जवान...।'

'वाह-वाह।' गोरधन ने खीर खाते हुए मूछों के बाल हटाए—'तो यूं कहो, आज जेठ का दशहरा नहाते हुए, नदी पर पार्वती चाची ने मुक्त भाव से शुभ वचनों की झड़ी लगा दी। आज मुझे भी अच्छा खाना मिल गया। खूब पेट भरा है।'

रामप्यारी ने आंखें तरेरीं—'तो क्या और दिन भूखे रहते हो?'

'अरे नहीं, रामप्यारी आई है, तो मुझे चटोरा बना दिया। तेरे रूप का तो मजनूं बना ही, अब तो इस समूची जिन्दगी का सौदाई हो गया।'

सुनकर, रामप्यारी ने ताना दिया—'ठीक तो कहती हैं गांव की औरतें, की रामप्यारी, तूने अपने आदमी को बिलकुल बदल दिया। बस, जब देखो तब, तेरे ढूंगे से लगा बैठा रहता है।' वह बोली—'भला मैं तुम्हें रोकती हूं किसी के पास आने जाने से। आज नदी पर हिरिया चमारी भी कह रही थी, तेरा आदमी दूसरों के दुख-दर्द भी समझता था। लेकिन अब तो, उसका घर है, या खेत...कौड़ी-कौड़ी का लालची बन गया है, तेरा आदमी।'

गोरधन खाना खा चुका था। उसने जेब से बीड़ी निकाली और पीने लगा। तभी रामप्यारी को एक अन्य बात याद आई और बोली—'क्यों जी, तुमने रामभरोसे की लड़की को कुछ भला-बुरा कहा था। उसका अपमान किया था क्या?'

गोरधन ने कहा—'वह ससुरी जब देखो तब खेतों के डौले आ खुरचती है। घास खोदती है।'

'राम-राम। उसे 'ससुरी' कहते हो। वह सयानी लड़की है। आज वह नदी पर थी। अपनी बात कहते रो पड़ी थी।'

'तो यूं कहो, आज नदी पर खूब रामायण बांची गई। न जाने किस-किसकी बखिया उधेड़ी गई होगी।' गोरधन हंसा—'जब चार औरतें एक जगह होती हैं, तो आदमियों की शामत आ जाती है।'

रामप्यारी तुनक उठी—'नहीं, अब तुम सचमुच बदल चले हो। उस दिन रहमत के लड़के ने ईख का गन्ना तोड़ लिया, तो उसे भी खूब मारा था।'

'और उस अल्लाह बख्श की लड़की का क्या कसूर था ? उसे क्यों भला-बुरा कहा ? कल मेरे पास आई थी।'

'अजी देवीजी, इन खेतों पर मैं खून-पसीना बहाता हूं। वह छोकरी भी साग तोड़ कर ले चली थी।'

रामप्यारी बोली—'इन आदमियों से तुम कह लेते हो, लेकिन जो जंगल के पशु-पक्षी हैं, उनसे क्या कहोगे। वे भी तो इन्हीं खेतों से पेट भरते हैं।'

गोरधन चुप था। वह उस विषम समस्या का कोई सुझाव नहीं पा रहा था।

रामप्यारी ने कहा—अब भाव अच्छे हैं, अनाज बेच दो।'

तुरन्त ही, गोरधन बोला—'अभी नहीं। सरकार को जितना देना था; दे दिया। मैंने तय कर लिया है, जब अनाज की अधिक मांग होगी, तब बेचूंगा।'

'वह हिरिया आई थी। थोड़े गेहूं मांगती थी।'

'नहीं, नहीं, साफ मना कर देना उससे। गेहूं हमें भी तो चाहिए।' गोरधन बोला—'जब तू इस घर की मालकिन बनी है, तो आगा-पीछा भी देख। भगवान ने चाहा और लड़का हो गया तो मुझे गांव भर को खिलाना पड़ेगा। बीस मन गेहूं लग जाएगा, कम-से-कम। हमें भी साल भर का खाना चाहिए। गेहूं का भाव चढ़ा, तो कुछ पैसा भी आएगा। यह हरजस का खेत मेरी आंख में चढ़ा है, यदि मौसम ठीक रहा, तो अगले साल खरीद लूंगा। कुछ रुपया तो उसे दिया हुआ है। लड़की के विवाह में उसने लिया था।'

पति से बात सुनी तो रामप्यारी स्तब्ध रह गई। उसका सिर घूम गया। आंखों में अन्धेरा छा गया। उसे लगा कि उसका आदमी, जो उसे अपने प्राणों की सेज पर सुलाता है, प्यार करता है, अब आदमी से भेड़िया बन चला है। उसके मन में बात उठी, ठीक तो कहती हैं गांव की औरतें, मैं आई हूं, तो अपने आदमी को बदल बैठी हूं। अब इसमें इन्सान के लिए दया नहीं ममता नहीं, समर्पण का भाव नहीं।

मानो अशान्त भाव में रामप्यारी बोल उठी, 'और जब हरजस अपना खेत बेच देगा, तो खाएगा क्या ? तब इस गांव में कैसे रहेगा ? न न उसका खेत नहीं लेना चाहिए।'

गोरधन ने रामप्यारी से वह अप्रत्याशित बात सुनी, तो अपने स्वर में क्षुब्ध भाव लेकर बोला—'ओ, रामप्यारी। तू धर्मावतार न बन। यह धरती का चक्कर इसी तरह घूमता है। समय के साथ आदमी बदलता है। देखती है न धनपत बनिया को, किसी समय उसके पास जमीन के नाम पर कुछ नहीं था। लेकिन अब गांव का जमींदार बना बैठा है। जब दूसरा युद्ध छिड़ा तो लाला ने भूखे मरते किसानों से सब जमीन झटक ली। कौड़ियों के मौल पा ली। यह तो बड़ा गांव था, मेरी प्यारी, सब लोग शहरों में भाग गए। शहरों के कारखानों में जा लगे।'

'तब तो यह हरजस भी चला जाएगा, एक दिन। मौहल्ले का एक घर और बन्द हो जाएगा।'

'तो क्या हुआ। वह घर बेचेगा, तो मैं तो लूंगा। हमारे पास भी जगह कम है। चार आदमियों के लिए बैठक नहीं।'

'हे राम।' बलात् रामप्यारी के मुंह से निकला—'यूंतो कहो, गांव के लोग ही गांव की जड़ खोदते हैं। लाला धनपत भी कलंक है, इस गांव के लिए।'

कलंक नहीं सांप। बहुतों को डस लिया है, उसने। कम्बख्त के घर दो बार डाका भी पड़ चुका है। एक बार तो मैं मरते-मरते बचा था, उन डाकुओं से लड़ते हुए।'

रामप्यारी ने कहा—'मैंने सुना था। तभी तो तुम्हें सरकार ने इनाम में बन्दूक दी थी।' वह बोली—'लेकिन डाकू लाला नहीं ? गांव से जो लुट-पिट क्या भागे, वे ही अब डाकू बने हैं। वे डाकू लाला ने पैदा किए हैं।'

विषम भाव से गोरधन मुस्कराया—'दबे पैर सब कान कटाते हैं, रामप्यारी। कौड़ियों के मोल जमीन बेंचने वाले भूखे थे। उन्हें बच्चों का पेट भरना था।'

'लेकिन लाला को ऐसा नहीं करना था। अब उसकी कौन बात पूछता है। गांव का बच्चा-बच्चा शत्रु बना है।'

विषाक्त भाव से गोरधन बोला—'इस धरती पर धर्मावतार बनकर भी नहीं जिया जा सकता। तब तो भूखों मरना पड़ेगा।'

रामप्यारी ने घोटों पर मुंह रखा था। तभी कहा—'मदान्ध भेड़िया बनना भी शोभा नहीं देता। हम खाएं, पड़ौसी भूखा मरे, भला यह कैसे चलेगा। वह भूखा एक दिन हमें नोच लेगा। खा जाएगा।'

दुलार के स्वर में गोरधन बोला—'बड़ी नादान है तू। नासमझ है। औरत है न, तो दिल मुलायम है।'

तब रामप्यारी ने अपना मुंह ऊपर उठाया—'देखो, मैं औरत बनकर ही तुम्हें बांध बैठी हूं। मैं दूसरी औरतों से सुन चुकी हूं, तुम पूरे सैलानी थे। खेतों पर भी नहीं आते-जाते थे। मां-बाप झींकते थे। आज मुझसे जहां-तहां कहा जाता है कि अरी भलीमानस, तेरा आदमी गांव भर का हमदर्द था, दूसरों के दुःख सुख में शरीक होता था, अब बदल गया। तूने छीन लिया। कहो तो, क्या मैं तुम्हें किसी के पास जाने से रोकती हूं। किसी से छीनती हूं। तुम मुफ्त में बदनामी दिलाते हो। जब देखो तब, औरतें पनघट पर यही ताने देती हैं। और मैं कहती हूं, तुम दूसरों की दुआ लो, अभिशाप मत लो। इस गांव की माटी में खेले हो, पले-पोसे हो, तो इसका सम्मान करो। जो गांव से गया है, उसे भी बुला लो।'

तब गोरधन चुप था। वह जैसे रामप्यारी से कोई उद्‌बोधन प्राप्त कर रहा था। दिन भी शुभ था। जेठ का दशहरा था। उस दिन वह प्रातः से ही प्रसन्न था। रामप्यारी ने खाना भी बढ़िया खाने को दिया था।

वह जिज्ञासा के भाव में बोला—'तो मैं क्या करूं ?'

'तुम अच्छे इन्सान बनो, बस, यही मेरी मांग है। आज जब मुझसे यह कहा गया कि मेरे पेट का बच्चा अपने बाप पर जाएगा; ऐसा ही सुन्दर होगा, तो मेरा रोम-रोम खिल गया था। मुझे लगा, उस नदी के तट पर मुझे कोई बड़ा खजाना मिल गया। और तुम हो कि बस, अब धन की बात सोचते हो। लगता है यह भूल बैठे, धन से बड़ी सम्पदा मनुष्यता है। हमारे मन की दया है।'

गोरधन चुप था। वह जैसे रामप्यारी से बहुत बड़ी बात सुन रहा था। वह उसकी औरत थी। उसके शरीर का प्रत्येक अंग वह देखता था। विहंसता था। उस रामप्यारी ने उसकी वासना तृप्त की थी। उसे प्यार दिया था। पूर्णरूप से अपना समर्पण कर दिया था, उसके सामने। परन्तु आज उसे रामप्यारी का मन भी देखने को मिला। कितना उज्ज्वल, कितना पुनीत !'

रामप्यारी बोली—'एक बात कहती हूं। अभी तो लोगों ने फसल उठाई है। बहुत से घरों में अनाज भरा है। लेकिन कुछ घर ऐसे भी हैं गांव में कि जहाँ अन्न का दाना नहीं।' उसने कहा—'मैं सोच नहीं पाती कि किसान अन्नदाता क्यों है ? कसे है। आज का किसान तो बनिया है। धरती की छाती फोड़ कर अन्न पैदा करता है और ऊंचे भाव पर बेचना चाहता है : किसान भी अब अवसरवादी है। लोगों की विवशता का लाभ उठाता है। यही तो करता है, कारखानेदार और सरमायेदार···धनपत बनिये में और तुम में अन्तर क्या है। रामू के घर कल से चूल्हा नहीं जला। अल्लाहमेहर का परिवार भी भूखा है। आई थी उसकी मेहरारू दो मन गेहूं मांगने, भला मैं कैसे दे देती ? तुम मेरी चोटी पकड़ कर बाहर निकाल देते।'

एकाएक आतुर बनकर गोरधन बोला—'कैसे बात करती है, तू मालकिन है। अब जा, घर। मैं भी जल्दी लौटूंगा। खेत थोड़ा रह गया है। इसमें भैंस और बैलों के लिए चारा बो दूंगा।'

रामप्यारी ने खाने के बर्तन समेट लिए और चल पड़ी। गोरधन फिर बैलों को हल में जोत कर काम पर लग गया। उस समय सूरज सिर के ऊपर आ गया था। पक्षी भी पेड़ के तनों में छुपे थे। सूरज आग उगल रहा था। धरती तप रही थी। लेकिन आश्चर्य, गोरधन का मन प्रफुल्ल था। शीतल बना था।

× × ×

संध्या समय गोरधन ने कोठे से कुछ गेहूं निकाले, उनकी गठरी बांधी और सिर के ऊपर उठा कर बाहर चल दिया। रामप्यारी ने चाहा कि टोके, पूछे, परन्तु वह तो जैसे स्वयं गंगा में गोता मार रही थी, अपने पति को भी उस निर्मल धारा में अपने-आपको पखारता पाती थी। उसे पता था, वह गेहूं अल्लाहमेहर के घर जा रहा था। जाते-जाते वह कह गया, वह बोरी में गेहूं रखा है, रामू आए तो ले जाएगा। मैं अब कुछ संचय नहीं करूंगा। जो कुछ है मेरे पास, जनता जनार्दन के चरणों में अर्पित कर दूंगा।

रामप्यारी ने बात सुनी, तो ऊपर आकाश की ओर देखने लगी। मानो वहां कोई था, जो उसे आशीष प्रदान कर रहा था। वह मुस्करा रही थी।

श्याम नगर
पिलोखड़ी फार्म, लिसाड़ी गेट,
मेरठ-2

□

वह मेरा हिन्दुस्तान

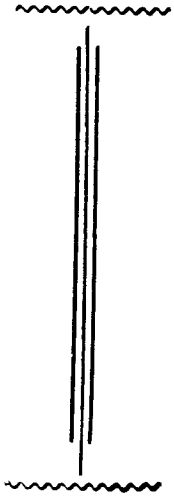

कुन्दन सिंह 'सजल'

हिमगिरि जिसका मुकुट, हरित वसुधा जिसका परिधान है।
सागर जिसके पग धोए, वह मेरा हिन्दुस्तान है॥
प्राची में उग प्रथम रश्मि से, रवि जिसका अभिषेक करे।
जहां समन्वय भाव, विविधता को समेट कर, एक करे॥
जिसके सन्तों की वाणी में निहित, प्रगति का गान है।
धड़कन जिसकी वेद-मन्त्र, वह मेरा हिन्दुस्तान है॥
गंगा-यमुना जैसी पावन, नदियां जिसकी बाहें हैं।
गीता-रामायण सी पुस्तक, जिसकी दिव्य निगाहें हैं॥
जिसका हर आंगन मुकुलित, सुरभित, विकसित उद्यान है।
नगर नगर जिसका बसन्त, वह मेरा हिन्दुस्तान है॥
हर बालक है राम, कृष्ण, मधुवन जिसका हर कोना है।
मिट्टी जिसकी चांदी अनुपम, फसल खेत की सोना है॥
हर बाला जिसकी सीता, राधा, लक्ष्मी का भान है।
स्नेहमयी परम्परा जिसको, वह मेरा हिन्दुस्तान है॥
हर सन्ध्या है मिलन भोर जिसकी, जागृति का नाद है।
रातें अमृत कलश, दिवस नवजीवन का संवाद है॥
हर मजदूर, किसान सृजनरत, रक्षारत वीर जवान है।
जिसकी हर करवट मिसाल, वह मेरा हिन्दुस्तान है॥

केन्द्र के समाचार

नए उर्वरक कारखाने

पांचवीं योजना के मसौदे में नत्रजनीय और फास्फेटिक उर्वरक कारखानों के उत्पादन का लक्ष्य क्रमशः 60 और 17 लाख-टन रखा गया था, पर नए अनुमान के अनुसार 40 लाख टन नत्रजन और 12 लाख टन फास्फेटिक उर्वरकों का ही लक्ष्य पूरा होगा। इस समय दोनों उर्वरकों का उत्पादन क्रमशः 16 लाख व 6 लाख टन है। पांचवीं योजना में सरकारी क्षेत्र में पांच और निजी क्षेत्र में तीन उर्वरक कारखाने लगाए जाएंगे। भटिंडा, पानीपत, ट्राम्बे और मथुरा के उर्वरक कारखानों की क्षमता 900 टन अमोनिया प्रतिदिन होगी। पाराद्वीप कारखाने की क्षमता 1,350 टन प्रतिदिन होगी। निजी क्षेत्र के कारखाने बड़ौदा और कोटा में लगाए जाएंगे।

ग्रामीण शिक्षा योजना

शिक्षा मन्त्रालय जल्दी ही ग्रामीण कालिज शिक्षा कार्यक्रय शुरू करने वाला है। विश्वविद्यालय अनुदान आयोग के अध्यक्ष श्री जार्ज जैकब के नेतृत्व में समिति कार्यक्रम की योजना पर विचार कर रही है जिसमें स्नातक स्तर पर परम्परागत विषयों के अलावा ग्रामीण महत्व के विषय—ग्रामीण अर्थशास्त्र, ग्रामीण समाजशास्त्र, पोषण, प्रसार शिक्षा और सामुदायिक विकास पढ़ाए जाएंगे। शुरू में योजना हर राज्य के कुछ कालिजों में शुरू की जाएगी।

गोबर गैस संयन्त्र

केन्द्रीय कृषि मन्त्रालय ने निर्णय किया है कि अपने घरों या खेतों में गोबर गैस के संयन्त्र स्थापित करने के इच्छुक व्यक्तियों को 25 प्रतिशत मदद दी जाएगी। इस सम्बन्ध में औपचारिक घोषणा शीघ्र ही कर दी जाएगी। ऐसा उर्वरकों की कमी तथा गोबर का उपयोग जलाने में न होने देने के लिए किया जा रहा है। इससे कुकिंग गैस की कमी पूरी करने में मदद मिलेगी। खादी तथा ग्रामोद्योग आयोग 1961 से गोबर गैस संयन्त्रों के विकास पर ध्यान दे रहा है तथा प्रति संयन्त्र 300 रु० का अनुदान दे रहा है। आयोग ने 1,500 रु० से 40 हजार रु० की लागत वाले तथा प्रतिदिन 60 घनफुट से लेकर 5 हजार घनफुट गैस क्षमता वाले तथा विभिन्न आकार के गोबर गैस संयन्त्रों के डिजाइन तैयार कर लिए हैं।

पोषण नीति

समन्वित आहार और पोषण नीति के निर्धारण और क्रियान्वयन के लिए केन्द्रीय स्तर पर एक उच्चस्तरीय संगठन बनाना चाहिए। यह सिफारिश एशिया और सुदूर-पूर्व के लिए आहार पोषण नीति और नियोजन सम्बन्धी गोष्ठी में की गई।

इस गोष्ठी का आयोजन खाद्य और कृषि संगठन ने भारत सरकार के साथ मिलकर किया था। 21 दिन की इस गोष्ठी में बंगाला देश, बर्मा, भारत, इंडोनेशिया, मलेशिया, नेपाल, फिलिपीन, श्रीलंका और थाईलैंड के प्रतिनिधियों ने भाग लिया। खाद्य और कृषि संगठन, संयुक्त राष्ट्र अन्तर्राष्ट्रीय बाल आपात कोष और विश्व स्वास्थ्य संगठन ने भी इसमें भाग लिया।

गोष्ठी ने सिफारिश की कि पोषण कार्यक्रम के प्रभावशाली प्रबन्ध के लिए पोषण विशेषज्ञों को आर्थिक नियोजन में प्रशिक्षण दिया जाना चाहिए और आर्थिक और सामाजिक नियोजकों को पोषण सम्बन्धी समस्याओं की जानकारी दी जानी चाहिए।

गोष्ठी ने उपलब्ध साधनों के अधिकतम उपयोग और विभिन्न अन्तर्राष्ट्रीय एजेंसियों के बीच समन्वय की भी सिफारिश की।

अच्छे पोषण के लिए खाद्य उत्पादन में वृद्धि तथा भण्डारण, विधायन, गुण-नियन्त्रण और विक्रय व्यवस्था में सुधार आदि बातों पर भी जोर दिया गया।

गोष्ठी ने पोषण कार्यक्रम के साथ समन्वित स्वास्थ्य कार्यक्रम को भी मिलाने की सिफारिश की। क्षेत्र के देशों के बीच वैज्ञानिक अनुसन्धान और प्रौद्योगिकी की जानकारी के आदान-प्रदान का सुझाव दिया गया।

कर्नाटक की वार्षिक योजना

कर्नाटक की 1974-75 की वार्षिक योजना के लिए 116.25 करोड़ रु० की व्यवस्था की गई है। योजना मन्त्री श्री दुर्गा प्रसाद धर ने कहा कि राज्य की बिजली और सिंचाई की पुरानी योजनाएं जल्दी पूरी की जानी चाहिए ताकि राज्य में बिजली और सिंचाई की क्षमता बढ़े। उन्होंने परामर्श दिया कि सिंचाई परियोजनाओं में पर्याप्त धन व्यय किया जाना चाहिए ताकि पूंजी निवेश के लाभ जल्दी मिलने लगें।

बातचीत के दौरान यह अन्तिम रूप से निर्णय किया गया कि अतिरिक्त साधन जुटाने के लक्ष्य में 5 करोड़ रु० की बढ़ोत्तरी की जानी चाहिए तथा सिंचाई और बिजली पर व्यय की जाने वाली राशि बढ़ा दी जानी चाहिए।

[शेष पृष्ठ 35 पर

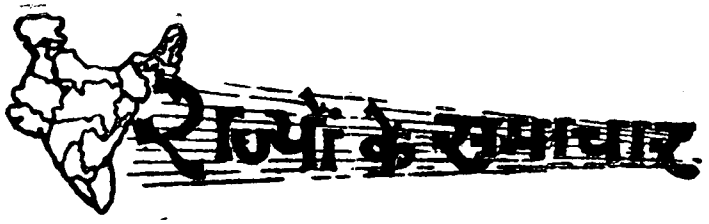

उत्तर प्रदेश

गेहूं का मूल्य

उत्तर प्रदेश राज्य कृषि परिषद् ने, जो कृषि सम्बन्धी नीति निर्णय तथा उनके कार्यान्वयन के लिए एक शीर्षस्थ संस्था है, देहरादून में आयोजित अपनी बैठक में यह सिफारिश की कि वर्तमान रबी में गेहूं का न्यूनतम खरीद मूल्य 110.00 रुपये प्रति क्विण्टल निर्धारित किया जाए ताकि किसान को उसकी उपज का उचित दाम मिल सके और वे कृषि विकास करने में प्रोत्साहन पा सकें।

परिषद् ने यह भी सिफारिश की कि धान का न्यूनतम खरीद मूल्य 98.00 रु० प्रति क्विण्टल निर्धारित किया जाए क्योंकि इससे कम मूल्य रखने में कृषकों को लाभ नहीं प्राप्त होगा। भूतपूर्व कृषि मन्त्री श्री विकल ने यह विश्वास व्यक्त किया कि इस न्यूनतम मूल्यों से राज्य के कृषक कृषि में समुचित विकास लाने में समर्थ हो सकेंगे।

परिषद् ने चौथी योजना में किए गए कृषि कार्यक्रमों का सिंहावलोकन करते हुए 1974-75 के लिए खाद्यान्न उत्पादन का लक्ष्य 211 लाख टन निर्धारित किया।

मध्य प्रदेश

टिड्डियों के रोकने का प्रशिक्षण

धार जिले में 21 से 31 जनवरी 74 तक तहसील स्तर पर कृषि विभाग और राजस्व विभाग के कर्मचारियों को टिड्डी आक्रमण की रोकथाम हेतु प्रशिक्षित करने के लिए प्रशिक्षण का आयोजन किया गया। इस प्रशिक्षण कार्यक्रम में सम्बन्धित तहसील के तहसीलदार, नायब तहसीलदार, रेवेन्यू इन्सपेक्टर, पटवारी, कृषि विस्तार अधिकारी और ग्राम कृषि विस्तार अधिकारी और ग्रामसेवकों ने भाग लिया। इस अवसर पर उन्हें टिड्डी दल के आक्रमण की रोकथाम के उपायों से अवगत कराया गया और कहा गया कि जैसे ही टिड्डी दल के आगमन का पता लगे, उसकी तत्काल सूचना सम्बन्धित जिलाधीश अथवा उप-संचालक कृषि को दें और इस प्रकार खेतों में टिड्डी दल को रुकने न दे।

गन्ना फसल प्रतियोगिता

मन्दसौर जिले के नागरी ग्राम के एक प्रगतिशील किसान श्री भेरूलाल भागीरथ पटेल ने 1972-73 में आयोजित भारतीय गन्ना फसल प्रतियोगिता में द्वितीय स्थान प्राप्त किया है। उन्होंने कोयम्बटूर 678 किस्म के गन्ने की बुआई करके प्रति हैक्टर 216.45 टन गन्ना पैदा किया है।

आदिवासी परियोजना

बस्तर जिले के जिलाधीश तथा आदिवासी अधिकरण के अध्यक्ष ने हाल ही में कोंटा के आदिवासी विकास परियोजना क्षेत्र का दौरा किया तथा परियोजना की प्रगति पर सन्तोष व्यक्त किया।

रबी कार्यक्रम के अन्तर्गत इस परियोजना क्षेत्र में 38 एकड़ में गेहूं तथा 210 एकड़ में कुसुम की बोआई की जा चुकी है तथा कृषकों को सिंचाई की सुविधा उपलब्ध कराने हेतु 10 डीजल पम्प खरीदे जा चुके हैं, जो प्रदर्शन खेतों में सिंचाई करना आरम्भ कर चुके हैं। इसके अलावा, आलू, गोभी तथा अन्य शीतकालीन सब्जियों का भी प्रदर्शन किया जा रहा है। विशाल पैमाने पर प्रदर्शन से आदिवासी अत्यन्त खुश हैं।

सिंचाई कार्यक्रम के अन्तर्गत अब तक 10 लाख रु०की लागत के पांच निर्माण कार्य स्वीकृत किए जा चुके हैं, जिनमें कार्य आरम्भ हो चुका है।

भूमि सुधार कार्यक्रम के अन्तर्गत तीन ग्रामों में, भूमि समतलीकरण, तथा बांध निर्माण के लिए विस्तृत सर्वेक्षण आरम्भ किया जा रहा है, जिससे लगभग 80 एकड़ में आदिवासियों को खरीफ में कृषि उत्पादन अधिक मिलेगा।

कृषक प्रशिक्षण शिविर

पूर्व निमाड़ जिले के बुरहानपुर में पिछले माह तीन दिन का कृषक प्रशिक्षण शिविर आयोजित किया गया। इस प्रशिक्षण शिविर में कृषकों को खण्डवा जिले में कपास की भारी पैदावार लेने, संतरा,मौसम्बी एवं नींबू का उत्पादन बढ़ाने तथा उड़द, मूंग, अरहर और संकर कपास की अच्छी फसल बोने की उन्नत कृषि विधियों की जानकारी दी गई। इस अवसर पर कृषकों को जिले के ग्राम शाहपुर और झिरी में कपास की संकर फसल के बीजोत्पादन कार्यक्रम और झिरी में फसल की फुहारा द्वारा सिंचाई का अवलोकन कराया गया। इसके अतिरिक्त, उन्हें जवाहरलाल कृषि विश्वविद्यालय के कृषि अनुसन्धान प्रक्षेत्र खण्डवा की फसलों का अवलोकन कराया गया और कपास की विभिन्न जातियों की जानकारी दी गई। जिले के 60 कृषकों एवं कृषि कर्मचारियों ने इस प्रशिक्षण का लाभ उठाया।

राजस्थान

रोजगार कार्यक्रम

पाली जिले में क्रैश कार्यक्रम के अन्तर्गत इस वर्ष कुल 47 कार्य हाथ में लिए गए थे, उनमें से 36 कार्य पूरे हो चुके हैं तथा शेष कार्य प्रगति पर हैं। हाथ में लिए गए 31 सिंचाई कार्यों में से 24 कार्य पूरे हो चुके हैं और 12 भूसंरक्षण कार्य भी पूरे हो चुके हैं। इन दिनों क्रैश कार्यक्रम के अन्तर्गत 4 सड़कों तथा 11 सिंचाई के कार्यों पर कार्य चालू है।

इस कार्यक्रम के अन्तर्गत बनने वाली सड़कें बीजापुर-गोरिया सड़क तथा कनपुरा-फालना सड़क अब लगभग पूरी होने को है जबकि रानीवाडा सड़क पर लगभग 9 किलो-मीटर तक डामर बिछाया जा चुका है तथा कार्य प्रगति पर है। यह कार्य मार्च के अन्त तक पूरा होने की सम्भावना है और इस पर लगभग 3 लाख 65 हजार रु० व्यय होने का अनुमान है। इसी प्रकार पाली-खैरवा सड़क पर भी कार्य तेजी से चल रहा है।

सड़कों के अतिरिक्त सात सिंचाई कार्य भी आगामी मार्च माह के अन्त तक पूरे हो जाएंगे। इनके अतिरिक्त, इस कार्य-क्रम के अन्तर्गत 137 स्कूल के कमरों के लिए धनराशि स्वीकृत की गई है। क्रैश कार्यक्रम के अन्तर्गत चल रहे समस्त कार्यों पर अब तक कुल 5 लाख 12 हजार रु० व्यय हो चुके हैं।

हरियाणा

चतुर्थ डेयरी मेला

करनाल में 29 फरवरी से 2 मार्च 1974 तक चतुर्थ डेयरी मेला लगाया गया। इस मेले में इस बात का प्रदर्शन किया गया कि 5 हैक्टर क्षेत्र में 32 करन स्विस गायों के रखने से किस तरह 27,000 रुपए से अधिक सालाना लाभ प्राप्त हो सकता है। मेले में यह भी जानकारी दी गई कि, 1-2 किलो दाना सहित हरा घास खिलाने से किस प्रकार गाय से अधिक से अधिक 10 से 12 लिटर दूध प्रतिदिन प्राप्त किया जा सकता। है स्मरण रहे कि औसतन 10-12 लिटर दूध देने वाली करन स्विस गायें अधिकतम 43 लिटर तक दूध देती हैं। मेले में कृषकों को कम खर्चीले और अधिक सुविधाजनक शैड दिखाए गए, जहां पशुओं को साल भर रखा जा सकता है। किसानों ने अपनी शंकाओं का समाधान मेले में आए हुए वैज्ञानिकों से प्रश्न पूछ कर किया।

पेयजल सुविधाएं

हरियाणा सरकार ने 1973-74 के दौरान 154 गांवों को पेयजल सुविधाएं प्रदान करने का लक्ष्य निर्धारित किया था जिनमें से 25 दिसम्बर 1973 तक 79 गांवों को पेयजल सुविधाएं दी जा चुकी थीं।

1971 की जनगणना के अनुसार राज्य में कुल 6,731 गांव थे और 31 मार्च, 1973 तक राज्य के केवल 596 गांवों में ही पेयजल सुविधाएं उपलब्ध थीं।

भूमि-वितरण समारोह

गत दिनों जिला भिवानी के बहल नामक गांव में हरियाणा भूदान यज्ञ बोर्ड की ओर से भूदान भूमि वितरण हेतु एक विशाल सभा का आयोजन किया गया। इस सभा में हरियाणा के मन्त्री श्री चिरंजीलाल ने ग्राम बहल के नौ भूमिहीन परिवारों में भूदान बोर्ड की 130 बीघा भूमि का वितरण किया। राजस्व मन्त्री ने सभा को सम्बोधित करते हुए कहा कि देश में भूदान कार्यक्रम द्वारा लाखों एकड भूमि प्राप्त करके भूमिहीनों में वितरित की जा चुकी है। आपने कहा कि छोटे से राज्य हरियाणा में भी 8 हजार एकड़ भूमि भूमिहीन परिवारों को बांटने के लिए प्राप्त हो चुकी है।

भारत सरकार ने हरियाणा में बड़े व मध्यम दर्जे के उद्योग लगाने के लिए 15 जनवरी को समाप्त होने वाले पखवाड़े में 8 लाइसेंस तथा 5 आशयपत्र जारी किए। इन उद्योगों पर लगभग 734 लाख रुपए खर्च होंगे तथा इनमें 2,800 व्यक्तियों को रोजगार प्राप्त होगा।

केन्द्र के समाचार .....[पृष्ठ 33 का शेषांश]

पोट्टेरु पुनर्वास परियोजना

पोट्टेरु सिंचाई व पुनर्वास परियोजना के अन्तर्गत माना शिविर के 10,000 खेतिहर परिवारों का पुनर्वास किया जाना है। दण्डकारण्य परियोजना प्राधिकरण इस परियोजना को 1974-75 में शुरू करेगा तथा 6 वर्ष में पूरी करेगा।

उड़ीसा सरकार दण्डकारण्य परियोजना के मल्कानगिरि क्षेत्र में 40,000 एकड़ खेती-योग्य भूमि देने के लिए सहमत हो गई है। पोट्टेरु पर बांध बना कर इस भूमि की सिंचाई की जा सकती है।

इस क्षेत्र में लगभग 10,000 परिवारों को खेती के लिए 3-3 एकड़ के खेत देकर बसाया जा सकेगा तथा 1,000 अन्य परिवारों को गैर कृषि व्यवसायों में लगाया जाएगा।

सिंचाई परियोजना पर 14 करोड़ 65 लाख रुपए की लागत का अनुमान है। यह खर्च पुनर्वास विभाग द्वारा वहन किया जाएगा। उड़ीसा सरकार नहरें आदि बनाने का खर्चा उठाएगी। राज्य सरकार सिंचाई परियोजना को 1974-75 से 5 वर्षों में पूरा करेगी।

सिंचाई परियोजना के अन्तर्गत इस क्षेत्र की 12,000 एकड़ और भूमि को सुधारा जाएगा, जिससे 2,000 आदिवासी परिवारों का पुनर्वास सम्भव हो सकेगा।

"सिंह"— लेखक : रामेश वेदी ; प्रकाशक : प्रकाशन विभाग, सूचना और प्रसारण मन्त्रालय, भारत सरकार; पृष्ठ : 58; मूल्य : 3.25 रुपये ।

भारत सरकार के प्रकाशन विभाग से प्रकाशित इस पुस्तक में वनराज सिंह के बारे में संक्षिप्त रूपेण, विभिन्न विषयक तथा रोचक सामग्री प्रस्तुत की गई है। भूमिका के रूप में, प्रथम अध्याय में सिंह की अद्भुत शक्ति का हमारे देश में प्राचीन से अर्वाचीन काल तक सिंह के समान साहसी व पराक्रमी व्यक्तियों के नामान्त में उपाधिस्वरूप 'नरसिंह' या 'केसरी' आदि लिखने की प्रथा से सम्बन्धित वर्णन है। वेद-शास्त्रों से तथा चन्द्र-गुप्त मौर्य कालीन सिक्कों तथा दीवारों पर भी सिंह की आकृति से उपरोक्त प्रमाण की पुष्टि की गई है। दूसरे तथा तीसरे अध्याय में सिंह के निवास, संख्या तथा उसकी शिकार करने की आदतों पर प्रकाश डाला गया है। पुस्तक के अनुसार इस समय हमारे देश में सिंह पश्चिमी गुजरात में जूनागढ़ के पास गीरवन में पाया जाता है। 1968 की गणना के अनुसार गीरवन में 177 सिंह थे। गणना के तरीके को भी एक अलग अध्याय में संक्षिप्त रूप से समझाया गया है। इसके अगले अध्यायों में सिंह की दो नस्लों के तुलनात्मक अध्ययन के साथ-साथ उसके शरीर के अंगों का तथा क्षमता का वर्णन है जो सभी सामान्य ज्ञान के उत्सुकों के लिए लाभदायक तथा पठनीय है।

"पारिवारिक जीवन" अध्याय पढ़ने से पता चलता है कि सिंह भी मानवीय संयुक्त प्रणाली परिवार प्रथा के अनुरूप ही इकट्ठे रहते हैं तथा एक ही परिवार के सदस्यों की तरह मिल-जुलकर शिकार करते तथा खाते हैं। यह अध्याय सबसे बड़ा है। साथ ही पुस्तक का मुख्य आकर्षण भी यही है क्योंकि इस अध्याय में सिंहों के पारिवारिक जीवन से सम्बन्धित सत्य व रोचक सामग्री के अतिरिक्त सोलह श्वेत व श्याम चित्र हैं।

"सिंहों का प्रदर्शन" अध्याय पढ़ने के बाद प्रत्येक पाठक को यह अभिरुचि उत्पन्न हो सकती है कि वह भी गीरवन जाकर स्वच्छन्द रूप से विचरते वनराज का दर्शन करे क्योंकि उसमें वर्णन है कि गुजरात सरकार की ओर से निश्चित फीस लेकर-गीरवन घुमाने का प्रबन्ध है। अन्तिम अध्याय में 'तिलिया महाराज' नामधारी एक सिंह का रोचक वर्णन है।

इस प्रकार पुस्तक में कुल 10 अध्याय हैं। हर वर्ग के जिज्ञासु के लिए पुस्तक पठनीय व मनोरंजक है। आवरण पृष्ठ पर वनराज का तिरंगा चित्र सुन्दर है तथा पुस्तक की छपाई व शैली उत्तम है। किशोर वर्ग इसे विशेष रूप से पसन्द करेगा।

नरेन्द्र जोशी

हमारे पक्षी— लेखक : राजेश्वर प्रसाद नारायण सिंह; प्रकाशक : प्रकाशन विभाग, सूचना और प्रसारण मन्त्रालय, भारत सरकार, पटियाला हाउस, नई दिल्ली-1 ; मूल्य : 4.50 रु० ।

प्रस्तुत पुस्तक 'हमारे पक्षी' श्री राजेश्वर प्रसाद नारायण सिंह द्वारा लिखित पक्षियों के बारे में अपने ढंग की उत्तम रचना है। इसकी प्रस्तावना श्रीमती इन्दिरा गांधी ने लिखी है। प्रस्तावना में बताया गया है कि लेखक ने यह पुस्तक चाचा नेहरू की सलाह पर खासतौर से बच्चों के लिए पक्षियों के बारे में लिखी है। नेहरू जी बच्चों के साथ-साथ पशु-पक्षियों में भी पूरी रुचि रखते थे। उनकी 'मेरी कहानी' पढ़ने से यह बात स्पष्ट होती है। श्री राजेश्वर प्रसाद नारायण सिंह भी स्वयं पक्षी-मनोविज्ञान के विशेषज्ञ हैं और लेखक के रूप में भी उनका एक विशेष स्थान है। इस पुस्तक में उन्होंने कई प्रकार के पक्षियों के बारे में ऐसे तथ्य प्रकट किये हैं, जो न केवल बच्चों के लिए अपितु वयस्कों के लिए भी लाभदायक हैं।

पुस्तक में वर्णित पक्षियों में से अधिकांश पक्षी ऐसे हैं जिनका हमसे दैनिक सम्पर्क रहता है। प्रस्तुत पुस्तक में वैसे तो 58 प्रकार के पक्षियों का वर्णन है किन्तु उनमें से कुछ पक्षी तो प्रायः हमारे साथ, हमारे आगे-पीछे रहते हैं। इनमें भी कोयल, तोता, कबूतर, तीतर आदि ऐसे पक्षी हैं जो घरों में पाले जाते हैं।

लेखक ने कुछ पक्षियों के स्वभाव में एकता तथा सह-अस्तित्व के भाव दिखाए हैं तो कुछ पक्षी ऐसे भी हैं जिनका स्वभाव लड़ाकू है। कोयल और मोर जहां हमारे कान और आंखों को सुख देते हैं वहां कौवा जो कोयल और मोर की अपेक्षा हमारा निकटतम साथी है, हमारी घृणा का पात्र बनता है। इतना होने पर भी कौवा का एक महत्व है। किसी के आने पर कौवा के बोलने का शगुन मनाया जाता है। लोक-गीतों में कौवा के प्रति कहा गया है—'तेरी सोने में चोंच मढ़इयों'। मोर तो हमारा राष्ट्रीय पक्षी ही है। इन पक्षियों से न केवल मनोरंजन होता है बल्कि इनमें से कई हमारे लिए बहुत लाभदायक हैं।

पुस्तक चित्रों के कारण अधिक रोचक बन गई है। भाषा सुन्दर है तथा शैली प्रभावपूर्ण। रूपसज्जा आकर्षक है। इस पुस्तक से बच्चों को पक्षियों के बारे में काफी जानकारी मिलेगी।

इस सुन्दर कृति के लिए लेखक तथा प्रकाशक दोनों बधाई के पात्र हैं।

सुरेन्द्र प्रसाद अग्रवाल

अखिल भारतीय निबन्ध प्रतियोगिता

भारत सरकार के सामुदायिक विकास और सहकारिता विभाग, कृषि मन्त्रालय द्वारा बुनियादी साहित्य योजना के अन्तर्गत आयोजित द्वितीय अखिल भारतीय निबन्ध प्रतियोगिता के परिणामों की घोषणा बृहस्पतिवार 14 मार्च, 1974 को की गई। प्रतियोगिता का विषय था 'युवा पीढ़ी की दृष्टि में लोकतन्त्रीय संस्थाओं के रूप में पंचायती राज संस्थाएं'। भारत के विश्वविद्यालयों तथा महाविद्यालयों के सभी छात्र इस प्रतियोगिता में भाग ल सकते थे।

हिन्दी में प्रथम, द्वितीय एवं तृतीय निर्णीत की गई प्रविष्टियों को क्रमश: एक हजार रुपए, सात सौ पचास रुपए और पांच सौ रुपए की राशि से पुरस्कृत किया गया। अंग्रेजी में प्राप्त हुई प्रविष्टियों को कुल चार पुरस्कार प्रदान किए—प्रथम पुरस्कार 1,000 रुपए का तथा तीन अन्य प्रविष्टियों के लिए प्रत्येक को 750 रुपये का द्वितीय पुरस्कार प्रदान किया गया।

इस निबन्ध प्रतियोगिता के पुरस्कार विजेताओं की सूची इस प्रकार है :—

हिन्दी :

	नाम व पता	पुरस्कार की राशि
प्रथम पुरस्कार	कुमारी अभिलाशा कुलश्रेष्ठ बी० ए० (प्रथम वर्ष), सेंट जान कालेज, आगरा (उ०प्र०)	रु० 1000.00
द्वितीय पुरस्कार	श्री अथहर अली इन्टरमीडिएट छात्र, जमुना क्रिश्चियन कालेज, इलाहाबाद (उ०प्र०)	रु० 750.00
तृतीय पुरस्कार	श्री सुरेन्द्र कुमार 'मधुकर' एम० ए० (प्रथम सत्र), हिन्दी विभाग, जे०वी० जैन महाविद्यालय, सहारनपुर (उ०प्र०)	रु० 500.00

अंग्रेजी :

प्रथम पुरस्कार	श्री जोनाथन सैमयुल मथाई बी० एस० सी० (प्रथम वर्ष), फर्ग्यूसन कालेज, पूना-4 (महाराष्ट्र)	रु० 1000.00
द्वितीय पुरस्कार	श्री एन० वी० नागराजन बी० काम (अन्तिम वर्ष), दयानन्द कालेज आफ आर्ट्स एण्ड क्राफ्ट्स, पत्रकार कालोनी, बंगलौर (कर्नाटक)	रु० 750.00
द्वितीय पुरस्कार	कुमारी एल० मीना बी० एस-सी० (अन्तिम वर्ष), सेंट जोसेफ कालेज, पो०बा० 5031 बंगलौर-1 (कर्नाटक)	रु० 750.00
द्वितीय पुरस्कार	कुमारी एम०पी० लियोनी एम० ए० (द्वितीय वर्ष), सेंट टरैसा कालेज, एरनाकुलम (केरल)	रु० 750.00

सामुदायिक विकास और सहकारिता विभाग की बुनियादी और सांस्कृतिक साहित्य-योजना के अन्तर्गत विश्वविद्यालय एवं महाविद्यालय के छात्रों के लिए निबन्ध प्रतियोगिता का शुभारम्भ सन् 1972-73 में किया गया। इसका उद्देश्य छात्रों में सामुदायिक विकास, पंचायतीराज और सहकारिता के क्षेत्रों में हो रही विकास की गतिविधियों के प्रति रुचि पैदा करना था। गांवों के सजग-वर्ग, सामुदायिक विकास, पंचायती राज और सहकारिता से सम्बद्ध सरकारी और गैरसरकारी वर्ग के लिए

Regd. No. (D) D/98

LIBRARY

स्थानीय संसाधनों पर आधारित कारखाना

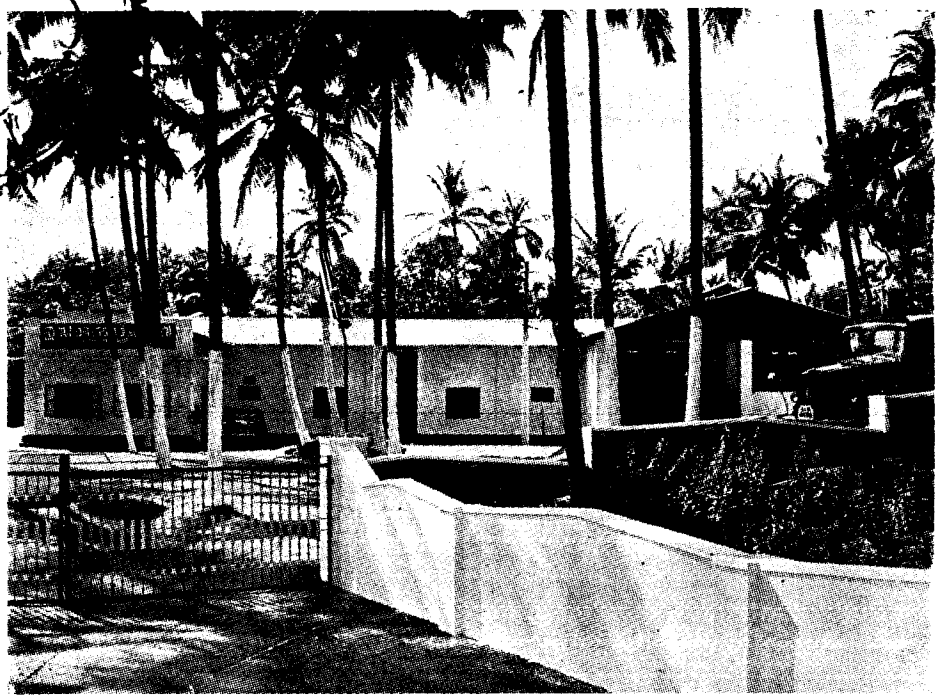

कोझीकोड़ जिले के कोडुवल्ली खण्ड में ग्रामीण उद्योग परियोजना ने स्थानीय संसाधन—नारियल के सूखे रेशे पर आधारित कारखाने की स्थापना में मदद दी है। कोडुवल्ली और उसके आसपास की पंचायतें ही कोझीकोड़ जिले में नारियल उत्पादन केन्द्र हैं और यहां पर पर्याप्त सुविधाएं उपलब्ध न होने से नारियल के सूखे रेशे का लाभकारी उपयोग नहीं हो रहा था। पर, ई० सी० रेशा उद्योग द्वारा बनाए जाने वाले चटाई के रेशों की बाहर के देशों में काफी मांग है।

यह कारखाना कालिकट से 22 किलोमीटर पूर्व में स्थित है और कोडुवल्ली पंचायत क्षेत्र में अपने प्रकार का एकमात्र कारखाना है। तीन लाख रुपए की कुल लागत में से परियोजना ने कारखाने को 38,400 रुपए का अनुदान दिया है और 94,000 रुपए के मूल्य की मशीनें किराया-खरीद की शर्तों पर मुहैया की हैं। इस ग्रामीण कारखाने में 50 लोगों को काम मिलेगा और धीरे-धीरे विकास होने पर अधिक संख्या में बेरोजगार लोगों को यहां काम मिल सकेगा।

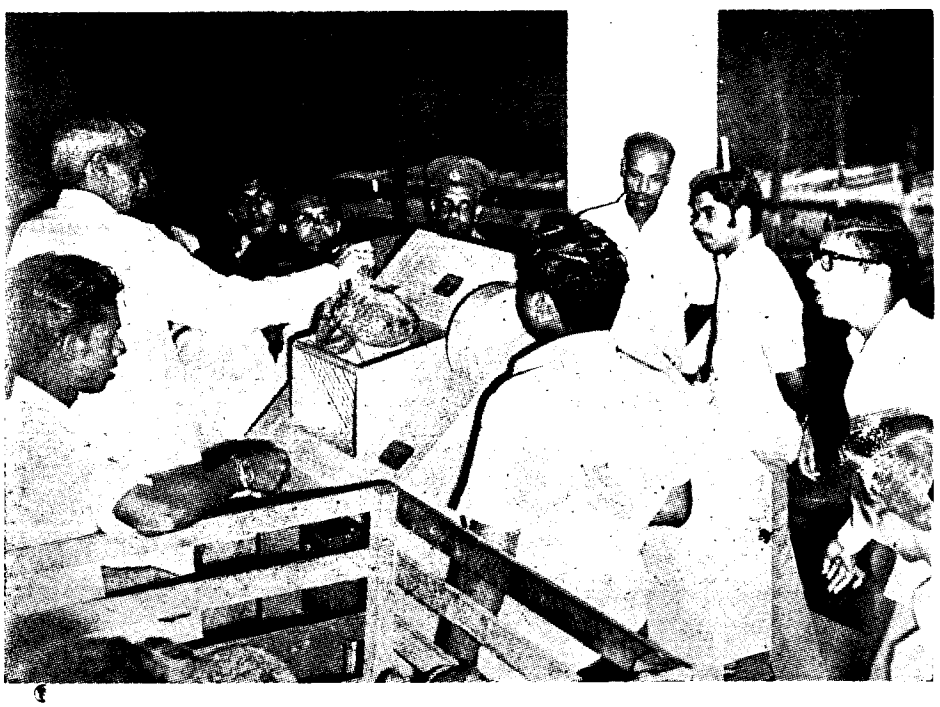

कारखाने में अभी हाल में ही काम शुरू हुआ है। यहां एक शिफ्ट (पारी) में 10,000 नारियलों के रेशों का विधायन किया जाएगा तथा एक मीट्रिक टन चटाई का रेशा तैयार होगा। इस कारखाने के मालिक श्री ई० सी० चेरिया अहमद ने केरल वित्त निगम को 2 लाख रुपए की आयातित मशीनें उपलब्ध कराने के लिए प्रार्थनापत्र दे दिया है। इन मशीनों के लग जाने पर वे अपने कारखाने में छल्लेदार रेशम भी बनाने लगेंगे क्योंकि विदेशों में छल्लेदार रेशे की बहुत मांग है।

निदेशक, प्रकाशन विभाग, सूचना और प्रसारण मन्त्रालय, पटियाला हाउस, नई दिल्ली-1
द्वारा प्रकाशित तथा केसरक्यारी इलैक्ट्रिक प्रेस, लाइब्रेरी रोड, दिल्ली-6 द्वारा मुद्रित।